खण्ड 2
संघवाद

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 2 संघवाद

भारत एक राज्यों का संघ है। इसमें केंद्र और राज्यों के अलावा स्थानीय इकाइयाँ भी आती हैं, जिन्हें हम पंचायती राज संस्थाऐं तथा नगरपालिका कहते है। यह खंड भारत में संघवाद के बारे में है, इसमें चार इकाइयाँ हैं जो भारत में शासन की प्रकृति के बारे में चर्चा करती हैं। इकाई संख्या 3 का संबंध विधायी, प्रशासनिक, आर्थिक संबंधों से है। इकाई संख्या 4 का संबंध राज्य एवं स्थानीय निकायों के बीच संबंधों से है। इकाई 5, 6 का संबंध राज्य की स्वायत्ता, क्षेत्रीय स्वायत्ता तथा शासन से संबंधित है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 3 संघ-राज्य संबंध : विधायी, आर्थिक एवं प्रशासनिक*

संरचना

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 भारतीय संघ का निर्माण और ऐतिहासिक कारक

3.3 केन्द्र और राज्यों के बीच विधायी संबंध

- 3.3.1 संघ सूची
- 3.3.2 राज्य सूची
- 3.3.3 समवर्ती सूची
- 3.3.4 अवषिष्ट शक्तियाँ
- 3.3.5 राज्य विधान पर केंद्र का नियंत्रण

3.4 केन्द्र और राज्यों के बीच प्रशासनिक संबंध

- 3.4.1 राज्यों को केन्द्र का दिशा निर्देश
- 3.4.2 अनुच्छेद 352 और 356 के तहत् आपातकाल की घोषणा
- 3.4.3 केन्द्र से राज्यों को शक्तियों का प्रत्यायोजन
- 3.4.4 राज्यपाल की नियुक्ति
- 3.4.5 अंतरराज्यीय जल संसाधन और राष्ट्रीय राजमार्ग
- 3.4.6 अंतर–राज्य परिषद
- 3.4.7 अखिल भारतीय सेवाऐं

3.5 केन्द्र–राज्य वित्तिय संबंध

- 3.5.1 अनुदान सहायता
- 3.5.2 वित्त आयोग
- 3.5.3 नीति आयोग
- 3.5.4 वर्तमान घटनाक्रम – माल और सेवा कर (जी. एस. टी.)
- 3.5.5 संविधान 101वाँ संषोधन अधिनियम 2016
- 3.5.6 जी.एस.टी. परिषद की संरचना

3.6 केन्द्र राज्य संबंधों को सुधारने का प्रयासः सरकारिता आयोग

- 3.6.1 संविधान के कार्य की समीक्षा के लिये राष्ट्रीय आयोग (एनसीआरडब्लयूसी)
- 3.6.2 मदन मोहन पुंछी आयोग

3.7 सारांश

3.8 संदर्भ

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

* डॉ. डी. आनंद, ऐसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली–110068

3.0 उद्देश्य

यह इकाई भारतीय संघ की प्रकृति एवं ऐतिहासिक परिस्थितियों से संबंधित है जिसने भारतीय संघ को आकार दिया। यह इकाई संविधानिक प्रावधानों से भी संबंधित है जो भारतीय संघ की कार्यप्रणाली को इंगित करते हैं। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :–

- संघवाद के अर्थ को समझा सकेंगे
- भारतीय महासंघ और आकार देने वाले ऐतिहासिक कारकों पर चर्चा कर सकेंगे
- केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों के विभाजन पर विस्तृत चर्चा कर सकेंगे
- भारतीय संघ के कामकाज में विवादित क्षेत्रों की पहचान कर सकेंगे
- भारतीय संघवाद की प्रकृति का आकलन कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

भारत राज्यों का एक संघ है। यह एक महासंघ है। संघीय सरकार में राजनीतिक शक्तियों का बंटवारा केन्द्र और राज्यों के बीच विभाजित किया जाता है। केन्द्र और राज्य दोनों ही अपनी शक्तियाँ संविधान से प्राप्त करते हैं और अपने क्षेत्राधिकार में स्वतंत्र रूप में कार्य करते हैं। संविधान की सर्वोच्चता संघवाद की विशेषताओं में से एक हैं। केन्द्र और राज्यों के बीच सत्ता का आवंटन शक्तियों के विभाजन के नाम से जाना जाता है। शक्तियों का विभाजन शक्तियों के पृथक्करण से अलग है।

पहला केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों के वितरण से संबंधित है जबकि दूसरा राज्यों तीन अंगों विधायिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के बीच शक्तियों के पृथक्करण से संबंधित है। भारत में, शक्तियों का विभाजन संविधान द्वारा आवंटित किया गया है। इस इकाई में आप शक्तियों के वितरण के विभिन्न पहलुओं जैसे विधायी, प्रशासनिक एवं वित्तिय के बारे में पढ़ेंगे।

3.2 भारतीय संघ का निर्माण और एतिहासिक कारक

भारतीय संघीय प्रणाली की उत्पत्ति का उन प्रावधानों से पता लगाया जा सकता है जो स्वतंत्रता पूर्व काल में शुरू किये गये थे। सरकार का संघीय रूप भारत सरकार अधिनियम 1935 ने स्थापित किया था। 1942 का क्रिप्स मिशन, 1946 का केबिनेट मिशन और नेहरू द्वारा संविधान सभा में पेश की गई उद्देश्य संकल्पना ने संघीय सरकार की स्थापना की। हालांकि, स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर भारत की स्थिति को ध्यान में रखते हुए, भारतीय संघीय व्यवस्था में राज्यों की तुलना में केन्द्र को मजबूत बनाने की जरूरत थी। दूसरे विश्व युद्ध के बाद, भारतीय अर्थव्यवस्था के सामने खाद्य संकट बहुत अधिक था। विभाजन के बाद, सांप्रदायिक दंगों ने कानून एवं व्यवस्था बनाये रखने की भी गंभीर चुनौती पैदा की। ऐसी परिस्थिति में, संविधान सभा ने संघीय ढाँचे के अंतर्गत मजबूत केन्द्र की आवश्यकता को रेखांकित किया। मजबूत केन्द्र की आवश्यकता पर जोर देते हुए संविधान सभा सदस्य एस. नागप्पा ने 5 नवंबर, 1948 को कहा जैसा कि हम सबको मालूम है हमने हाल ही में आजादी की लड़ाई जीती है, हमें इसे बरकरार रखने के लिये कुछ समय चाहिये इसके लिये हमें

केन्द्र को मजबूत बनाना होगा। हमें प्रांतों को एकजुट करने के लिये तथा उनमें एकता लाने के लिये, यह हमारे देश के हित में है कि एक मजबूत केन्द्र होना चाहिये। (सी. ए.डी., खंड 7, 252)। संविधान सभा ने यह महसूस किया कि यदि हम मजबूत केन्द्र के विचार को छोड़ देंगे तो हमारे देश की एकता, अखंडता और राष्ट्रीयता को खतरा पैदा हो जायेगा।

यहाँ यह बताना महत्वपूर्ण है कि भारतीय संविधान निर्माताओं ने, ''संघ'' राष्ट्र के इस्तेमाल से बचाव किया। संघवाद के स्थान पर, भारत को ''राज्यों का संघ'' कहा गया। भारत के संविधान में ''संघवाद'' शब्द का कहीं भी इस्तेमाल नहीं किया गया है। अनुच्छेद एक में कहा गया है कि ''भारत राज्यों का संघ होगा।'' डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा, ''महत्वपूर्ण बात यह है कि 'संघ' शब्द का प्रयोग जानबूझकर किया गया है। .... हालांकि प्रशासन की सुविधा के लिए देश और लोगों को अलग–अलग राज्यों में विभाजित किया जा सकता है, देश एक अभिन्न संपूर्ण है, इसके लोग एक ही स्रोत में प्राप्त एक ही परम सत्ता के तहत रहने वाले एक ही लोग है। इस प्रकार संविधान सभा संघीय सिद्धांतों के लिये प्रतिबद्ध थी, और एक मजबूत केन्द्र के लिये आष्वस्त भी थी। कुछ विद्वान इसे एक संघीय ढाँचे की तुलना में अधिक एकात्मक ढाँचा मानते है। के. सी. व्हीयर ने भारतीय व्यवस्था को ''अर्ध–संघीय राज्य'' कहा है। यह एक मध्यम मार्ग है, जिसे शास्त्रीय अर्थ में संघ नहीं कहा जा सकता है।

3.3 केन्द्र और राज्यों के बीच विधायी संबंध

भारतीय संविधान ने संघीय राजनीति की स्थापना की है। इसने केन्द्र एवं राज्यों के बीच स्पष्ट एवं विस्तृत शक्तियों का विभाजन किया है। संविधान के अंतर्गत विभिन्न प्रावधान किये गये है जो विधायी, कार्यपालिका, वित्तिय संबंधों से संबंधित है। हमें इनकी चर्चा करेंगे। संविधान के अनु. 245 और 255 भाग 11 में केन्द्र और राज्यों के बीच विधायी संबंधों का प्रावधान है। संविधान की 7वीं अनुसूची में केन्द्र एवं राज्यों के बीच शक्तियों का आवंटन एवं कार्यप्रणाली का प्रावधान किया गया है। इसमें तीन सूचियों का प्रावधान है – (1) केन्द्र सूची (2) राज्य सूची एवं (3) समवर्ती सूची।

3.3.1 संघ सूची

संघ सूची के विषयों पर केन्द्रिय संसद को कानून बनाने की विशेष शक्तियाँ शामिल हैं। संघ सूची में वर्तमान में 100 विषय हैं। विदेशी मामले, संचार, नागरिक उड्डयन, रेलवे, अंतर–राज्य व्यापार और वाणिजय, बैंकिंग, मुद्रा, बीमा, इत्यादि महत्वपूर्ण विषय संघ सूची में शामिल हैं।

3.3.2 राज्य सूची

राज्य सूची के विषयों पर शामिल विषयों पर कानून बनाने का अधिकार राज्य विधानमंडल को दिया गया है। वर्तमान में राज्य सूची में 61 विषय हैं, पहले इसमें 66 विषय थे। राज्य विधायिका द्वारा बनाये गये कानून जो राज्य सूची में दिये गये विषयों पर हैं वे उस राज्य पर विशेष रूप से लागू होते हैं। कानून और व्यवस्था, पुलिस, जेल, कृषि, भू–राजस्व, स्थानीय सरकार, जन–स्वास्थ्य, शराब, भूमि, राज्य सार्वजनिक सेवाऐं, और मत्स्य पालन जैसे महत्वपूर्ण विषय राज्य सूची में शामिल हैं।

3.3.3 समवर्ती सूची

केन्द्र और राज्य दोनों समवर्ती सूची में शामिल विषयों पर कानून बना सकते हैं। समवर्ती सूची के 52 विषय शामिल हैं। पहले इसमें 47 विषय थे। 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 ने राज्य सूची से पाँच विषयों को इस सूची में स्थानांतरित कर दिया गया है। शिक्षा, वन–विभाग, बिजली, नाम–तौला, उत्तराधिकार, श्रमिक संघ, जैसे महत्वपूर्ण विषय समवर्ती सूची में शामिल है। यदि केन्द्र एवं राज्य के बीच विवाद होता है तो केन्द्र द्वारा बनाये गये कानून राज्य के कानून की तुलना में प्रबल हैं। हालांकि, अनुच्छेद 254 (2) के तहत् इस नियम का अपवाद है। राज्य विद्यायिका का कानून समवर्ती सूची में शामिल किसी भी वस्तु पर एक ही विषय पर संसद के कानून से अधिक कामय रहेगा, यदि राज्य के कानून को राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित किया गया हो और राष्ट्रपति ने इस पर अपनी सहमति प्रदान की हो।

3.3.4 अवशिष्ट शक्तियाँ

संविधान के अनुच्छेद 248 के अंतर्गत अवशिष्ट शक्त्यों का प्रावधान है। अवशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र एवं संसद को दी गई हैं जो कि तीन सूचियों में से अलग विषयों पर कानून बना सकती है। इसके अंतर्गत लेवी एवं कर भी शामिल है।

3.3.5 राज्य विधान पर केन्द्र का नियंत्रण

केन्द्र और राज्यों के बीच उपर्युक्त शक्तियों के वितरण का पालन सामानय परिस्थितियों में किया जाता है। हालांकि केन्द्र सरकार का कुछ निश्चित परिस्थितियों में राज्यों पर वर्चस्व भी है। संविधान केन्द्रिय संसद को आपात स्थित में राज्य सूची में शामिल विषयों में कानून बनाने का अधिकार देता है।

1) अनुच्छेद 249 के अनुसार, राज्य सभा अपने सदस्यों के दो–तिहाई बहुमत के अनुरोध से एक प्रस्ताव पारित करती है तो संसद राज्य सूची के विषयों पर कानून बना सकती है। ऐसा कानून जो संसद द्वारा बनाया गया हे, वह एक साल तक जारी रहता है। हालांकि, यदि आवश्यक हो तो इसे एक और वर्ष के लिये बढ़ाया जा सकता है।

2) भारतीय संविधान का अनुच्छेद 250 संसद को राष्ट्रीय आपात के दौरान राज्य के किसी भी विषयों पर कानून बनाने का अधिकार देता है। हालांकि, संसद का कानून इस प्रावधान के तहत् आयातकाल के छः महिने के उपरांत काम करना बंद कर देगा। राज्य विधायिका द्वारा एक ही विषय पर कानून बनाने की शक्ति पर प्रतिबंधन नहीं है। हालांकि राज्य कानून और संसद के कानून के बीच असहमति के मामले में, केवल संसद का कानून प्रबल होना है।

3) अनुच्छेद 252 के तहत् यदि दो या अधिक राज्यों की विधानसभा के अनुरोध पर एक विषय पर कानून बनाने के लिये एक प्रस्ताव के माध्यम से केन्द्रिय संसद राज्य सूची के विषयों में जो राज्यों के लिये उपयोगी है, संसद ऐसे कानून बना सकती हैं।

4) संविधान का अनुच्छेद 253 संसद को यह अधिकार देता है कि, वह संपूर्ण भारत का किसी क्षेत्र का कोई हिस्सा, या किसी अन्य देश या देशों के साथ सम्मेलन

किसी भी संधि या अंतर्राष्ट्रीय समझौते को लागू करने के लिये कानून बनाने के लिये अधिकृत करता है।

5) भारतीय संविधान के अनुच्छेद 356 के तहत् एक राज्य में राष्ट्रपति शासन की घोषणा के दौरान केन्द्रिय संसद राज्य सूची में शामिल विषयों पर कानून बना सकती है।

6) उपयुक्त प्रावधानों के अलावा, केन्द्र, राज्य के कानूनों के ऊपर भी नियंत्रण रखता है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 200 के तहत् राज्यपाल किसी भी राज्य विधान मंडल द्वारा पारित विधेयक पर अपनी सहमति देने का अधिकार रखता है। राज्यपाल राज्य के विधायिका द्वारा पारित निर्दिष्ट विधेयकों को राष्ट्रपति के अनुमोदन के लिये आरक्षित रख सकता है। इसके अलावा, राष्ट्रपति को पूरा अधिकार है कि वह ऐसे बिलों पर सहमति दे या उन्हें निरस्त कर दे। कुछ मामलों में विधेयकों को जो राज्य सूची में शामिल है, उन पर राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति लेना जरूरी है। राष्ट्रपति राज्यों को निर्देश दे सकता है कि वे आपातकाल के दौरान पारित किये गये धन विधेयकों और वित्त विधेयकों को आरक्षित रखे। (अनुच्छेद 200) के अंतर्गत संविधान राज्यपाल को यह अधिकार देता है कि वह किसी विधेयक को राष्ट्रपति की सहमति के लिये आरक्षित रख सके। यह राज्यपाल का विशेषाधिकार है कि वह यह सुनिश्चित करे कि राज्यों के कानून संविधान के दायरे में आते हैं। वास्तविकता के विपरीत, इसकी प्रक्रिया का दुरुपयोग राज्य विधायिका द्वारा पारित एक बिल के द्वारा किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।
ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) केन्द्र और राज्यों के बीच विधायी शक्तियों के बंटवारे का संक्षिप्त में वर्णन कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

3.4 केन्द्र और राज्यों के बीच प्रशासनिक संबंध

भारत के संविधान ने एक मजबूत केन्द्र सरकार के साथ–साथ कई अन्य एकात्मक विशेषताऐं भी स्थापित की हैं। सामान्य परिस्थितियों में राज्य सरकारें अपनी संविधानिक शक्तियों का प्रयोग अपने क्षेत्राधिकार में ही करती हैं। केन्द्र की कार्यपालिका शक्तियाँ पूरे भारत को कवर करती हैं। उसी तरह राज्य की कार्यपालिका शक्तियाँ राज्य सूची में शामिल सभी विषयों तक संबंधित होती हैं। हालांकि, केन्द्र सरकार राज्य की कार्यपालिका शक्तियों पर कई तरह से नियंत्रण रखती है जैसा कि

संविधान के विभिन्न प्रावधानों में दिया गया है। संविधान के अनुच्छेद 162 के अनुसार केन्द्र सरकार की कार्यपालिका शक्तियाँ सभी विषयों तक विस्तृत है जिन पर संसद कानून बना सकती हैं। राज्य की कार्यपालिका शक्तियों केन्द्रिय संसद द्वारा बनाये गये कानूनों के साथ प्रयोग किया जा सकता है। अब इस पर हम चर्चा करेंगे।

3.4.1 राज्यों को केन्द्र का दिशा निर्देश

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 256 के अनुसार प्रत्येक राज्य की कार्यकारी शक्ति का प्रयोग संसद द्वारा बनाये गये कानूनों के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिये किया जायेगा। अनुच्छेद 257 केन्द्र सरकार को उस राज्य के लिये आवश्यक दिशा–निर्देश देने का अधिकार देता है। इस संबंध में राष्ट्रीय या सैन्य महत्व से संबंधित संचार के बारे में दिशा–निर्देश देने का अधिकार अधिकार है। संविधान भी इसका पालन न करने के निहितार्थ व राज्यों द्वारा दिशा–निर्देश को बताता है। अनुच्छेद 365 के अनुसार यदि कोई राज्य केन्द्र सरकार के निर्देश का अनुपालन करने में विफल रहता है तो राष्ट्रपति यह मान सकता है कि राज्य सरकार संविधान के प्रावधानों के अनुसार चलने में असमर्थ है। नतीजन, यह हो सकता है कि उस राज्य में अनुच्छेद 356 के तहत् राष्ट्रपति शासन लगाया जा सकता है।

3.4.2 अनुच्छेद 352 और 356 के तहत् आपात काल की घोषणा

अनुच्छेद 352 के तहत संविधान भारत के राष्ट्रपति को एक राष्ट्रीय आपातकाल घोषित करने का अधिकार देता है। यह आपातकाल युद्ध या बाहरी आक्रमण या आंतरिक सशस्त्रता विद्रोह से खतरे की स्थिति में लगाया जा सकता है। राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान केन्द्र के पास राज्य को निर्देश देने का कार्यकारी शक्ति है कि किस तरीके से कार्यकारी शक्ति का प्रयोग किया जाना है। यदि किसी राज्य में संवैधानिक मशीनरी खतरे में पड़ती है तो संविधान के अनुच्छेद 352 के तहत् केन्द्र उस राज्य में राष्ट्रपति शासन की घोषणा कर सकता है। इस अवधि के दौरान संघ सरकार राज्य मशीनरी पर प्रत्यक्ष नियंत्रण ले सकती हैं राष्ट्रपति (अर्थात् केन्द्र सरकार) राज्य सरकार के किसी भी काय्र को संभाल सकती है। भारत के लगभग सभी राज्यों को राष्ट्रपति शासन के तहत् रखा गया है और यह भारतीय संविधान के सबसे विवादास्पद और सबसे दुरुपयोग प्रावधानों में से एक है। विडंबना यह है कि 4 अगस्त, 1949 को डा. बी. आर. अंबडेकर ने संविधान सभा में यह अनुमान लगाया कि ऐसे अनुच्छेदों को कभी भी संचालन में नहीं लाया जायेगा, और ये एक प्रकार से निरर्थक (''Dead metter'') बने रहेंगे (सीएडी. वॉ IX:111)। अनुच्छेद 356 का दुरुपयोग नेहरू की सरकार के समय से ही शुरू हो गया था और यह आगे भी जारी रहा। नेहरू ने गोपीचंद भार्गव के नेतृत्व वाली पंजाब सरकार को बर्खास्त कर दिया था हालांकि उनके पास विधान सभा बहुमत था। 1954 में आंध्र प्रदेश सरकार को और 1959 में केरल की कम्युनिस्ट सरकार को भी राजनीतिक कारणों की वजह से बर्खास्त कर दिया गया था। जब जनता पार्टी की सरकार बनी 1977 में तो उसने भी सभी काँग्रेस सरकारों को बर्खास्त कर दिया था। क्योंकि, काँग्रेस पार्टी ने लोकसभा चुनावों में जनता का बहुमत खो दिया था। 1980 में इंदिरा गांधी वापस सत्ता में आई और सभी जनता पार्टी की सरकारों को बर्खास्त कर दिया था, वो भी उन्हीं कारणों की वजह से कि जनता पार्टी ने जनता का विश्वास खो दिया हैं।

3.4.3 केन्द्र से राज्यों को शक्तियों का प्रत्यायोजन

राष्ट्रपति, राज्य सरकार या उसके अधिकारियों को विशिष्ट कार्य सौंप सकते है जिनके लिये संघ की कार्यकारी शक्ति कुछ शर्तों के साथ या बिना शर्त के विस्तारित होती है। (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 258)।

3.4.4 राज्यपाल की नियुक्ति

राज्यपाल भारत में जो राज्यों का संघ है, राज्य का संवैधानिक प्रमुख होता है । भारत का राष्ट्रपति किसी भी राज्य के राज्यपाल की नियुक्ति करता है। राज्यपाल केन्द्र के एजेन्ट के तौर पर कार्य करता है तथा वह केन्द्र को रिपोर्ट भेजता है। इस प्रकार केन्द्र राज्यपाल के ऑफिस के माध्यम से राज्यों पर नियंत्रण करता है। राज्यपाल की कुछ विवेकाधीन शक्तियाँ हैं जिन्हें वह इस्तेमाल करता है। ये विवेकाधीन शक्तियाँ निम्न मुद्दों में अधिक सामान्य हो जाती है जैसे :– आम चुनावों के बाद सरकार का गठन, विशेष तौर पर मुख्यमंत्री पद के उम्मीदवार का चयन करना, विशेषकर जब किसी भी राजनीतिक दल को विधानसभा में स्पष्ट जनादेश नहीं मिला है, विधान सभा में बहुमत साबित करने का समय निर्धारण करना, तथा भारत के राष्ट्रपति के लिये बिलों को भेजने के लिये अपनी सहमति प्रदान करना।

3.4.5 अंतर्राज्यीय जल संसाधन और राष्ट्रीय राजमार्ग

संसद राष्ट्रीय राजमार्ग या जल मार्ग की घोषणा कर सकती है। अनुच्छेद 262 जल एवं अंतर–राज्य नदी एवं नदी घाटी से संबंधित है। संसद दो राज्यों के बीच पानी के बंटवारे को लेकर उत्पन्न विवाद में नियम और कानून बना सकती है।

3.4.6 अंतर–राज्य परिषद

अनुच्छेद 263 के अनुसार भारत का संविधान राष्ट्रपति को अंतर–राज्यीय परिषद के गठन का अधिकार देता है जो कि राज्यों के बीच उत्पन्न विवादों को निपटाने एवं उनकी जाँच का कार्य करेगी। इसका अन्य कार्य है उन विषयों की जाँच पड़ताल करना एवं चर्चा करना जिन पर राज्यों एवं केन्द्र दोनों का समान हित हो और, इन विषयों पर अपनी सिफारिशें देना जिन पर आम सहमति हो।

3.4.7 अखिल भारतीय सेवाऐं

केन्द्र और राज्य दोनों अखिल भारतीय सेवाओं को नियंत्रित करती है, (आई. ए. एस., आई. पी. एस. और आई. एफ. एस.) लेकिन, केन्द्र इन सेवाओं पर सीधा नियंत्रण रखती है। जबकि राज्यों का इन पर बहुत कम नियंत्रण होता है।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) राज्यों पर केन्द्र के प्रशासनिक नियंत्रण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

.....

.....

3.5 केन्द्र और राज्य वित्तिय संबंध

वित्तिय स्वायत्ता के बिना संघीय इकाइयों की राजनीतिक स्वायत्ता अधूरी है। लेकिन, राज्यों के वित्तिय संसाधनों के बंटवारे में संविधानिक प्रावधान है। अनुच्छेद 268 एवं 293 के संविधान के भाग 12 में केन्द्र–राज्य वित्तिय संबंधों से संबंधित है। संविधानिक प्रावधानों के अनुसार, कोई भी कर नहीं लगाया जा सकता, सिवाय कानूनी प्रावधानों के अनुसार। संसद को केन्द्र सूची में शामिल विषयों पर कर लगाने का अधिकार है, जबकि, राज्य सूची में कानून बनाने का अधिकार राज्यों को है। समवर्ती सूची में शामिल विषयों का कानून बनाने का अधिकार केन्द्र और राज्य दोनों को है। कराधान की अवशिष्ट शक्तियाँ केवल संसद के पास है। संविधान के 101वें संशोधन अधिनियम 2016 एवं जी.एस.टी. की शुरुआत के पहले कराधान केन्द्र और राज्यों के बीच विभाजित थी। संविधान केन्द्र एवं राज्यों के बीच लेवी और राजस्व का निर्धारण करना हैं। ये प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 268, 268ए, 269, 270 एवं 271 में दिये गये हैं। 101वें संशोधन ने विभिन्न केन्द्रिय एवं राज्य करों जैसे उत्पाद शुल्क, सेवा शुल्क, बिक्री कर, प्रवेश कर और मनोरंजन कर आदि को बदल दिया है।

3.5.1 अनुदान सहायता

राज्यों के साथ राजस्व साझा करने के अलावा केन्द्र जरूरतमंद राज्यों को अपने संसाधनों से अनुदान सहायता देता है। अनुच्छेद 275 के अंतर्गत, संविधान इस संबंध में संसद को अधिकार देता है। अनुच्छेद 282 के तहत केन्द्र और राज्य दोनों किसी भी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए अनुदान दे सकते हैं ओर केन्द्र इस श्रेणी के तहत् राज्यों को सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए अव्यवस्थित अनुदान देता है।

3.5.2 वित्त आयोग

वित्त आयोग संविधानिक निकाय है जिसका सृजन केन्द्र राज्यों के वित्तिय संबंधों के लिये सुझाव देता है, खासकर केन्द्र एवं राज्यों के बीच करों के वितरण में सिफारिश देता है। अनुच्छेद 280 भारत के राष्ट्रपति को अधिकार देता है कि वह वित्त आयोग की नियुक्ति करे और वह यह सिफारिश करे। केन्द्र एवं राज्यों के बीच करों का वितरण एवं संचित निधि से राज्यों के राजस्व के लिय अनुदान सहायता के लिये नियम निर्धारित करना।

3.5.3 नीति आयोग

केन्द्र सरकार ने 2014 में केबिनेट के प्रस्ताव के द्वारा योजना आयोग को हटा कर उसके स्थान पर नीति आयोग की स्थापना की थी। इसका लक्ष्य था राष्ट्रीय विकास को प्राथमिकता देना, जिसमें राज्यों का सहयोग आवश्यक है। नियोजित समर्थन पहल और तंत्र के माध्यम से सहयोगी संघवाद को बढ़ावा देना तथा आर्थिक–नीति निर्माण प्रक्रिया में राज्यों की भागीदारी को बढ़ावा देना शामिल है।

3.5.4 वर्तमान घटनाक्रम – (माल एवं सेवा कर) जी. एस. टी.

जी.एस.टी. की धारणा हालिया विचार नहीं है। पूर्व प्रधान मंत्री अटल–बिहारी वाजपेयी ने जी.एस.टी. का विचार पेश किया था और वर्ष 2000 में एक समिति का गठन किया जिसको भारत में जी.एस.टी. की डिजाइन और आकार का कार्य करना था। 2003 में

भारत सरकार ने राजकोषिय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन के लिए एक टास्क फोर्स (कार्य दल) का गठन किया। इस टास्क फोर्स ने सभी वस्तुओं एवं सेवाओं कर एक व्यापक कर योजना को लागू करने की सिफारिश की और मौजूदा कर योजना को हटाने की सिफारिश की थी। यह कर केन्द्रिय और राज्य स्तरीय, मूल्य वर्धित कर (वैट) के नाम से जाना जाता है। समिति ने सीमा शुल्क को छोड़कर सभी अप्रत्यक्ष करों को बदलकर एक समान कर की सिफारिश की थी।

3.5.5 संविधान का 101वाँ संशोधन अधिनियम 2016

कर ढ़ाँचे में बदलाव और जी.एस.टी. लागू करने के लिये संवैधानिक संशोधन की आवश्यकता है। ऐसा एक संशोधन केन्द्र और राज्यों को जी.एस.टी. लगाने और एकत्र करने के लिये अधिकार प्रदान करता है। इन सभी पहलुओं से निपटने के लिये दिसंबर 2014 में लोक सभा में संविधान संशोधन बिल पेश किया। यह संशोधन 122वाँ विधेयक था। संसद के निचले सदन ने मई 2015 में विधेयक पारित किया। राज्य सभा ने कुछ संशोधनों के साथ इसको पारित किया तथा अगस्त 2016 में इसे लोकसभा में पारित किया। इस बिल को राज्यों की आवश्यक संख्या से पुष्टि की गई तथा 8 सितंबर 2016 को राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हुई। और उसके बाद 2016 में 101वाँ संविधान संशोधन अधिनियम पारित हुआ।

केन्द्र और राज्यों की वित्तीय शक्तियाँ बिना संविधान के संबंधित क्षेत्रों को ओवरलैप किये प्रतिष्ठित है। केन्द्र के पास निर्माण पर कर लगाने (मानव उपयोग अफीम नशील पदार्थों के लिये मादक शराब को छोड़कर) की शक्ति है, जबकि राज्यों पास माल की बिक्री पर कर लगाने का अधिकार हैं। अंतर–राज्यीय बिक्री में केन्द्र के पास कर (केन्द्रिय बिक्री कर) लगाने की शक्तियाँ होती हैं लेकिन, कर को एकत्र करने की पूरी जिम्मेदारी आरीजिनैंटिग राज्यों की होती है। सेवाओं के लिये, केवल केन्द्र ही सेवा कर लगाने का अधिकार रखता है। राज्य सामानों की भारत से खरीद एवं बिक्री आयात पर कर नहीं लगा सकते हैं या निर्यात पर, जबकि केन्द्र मूल सीमा शुल्क के अतिरिक्त करों को एकत्र करता है (http://www.gstcouncil.gov.in/brief-history-gst, accessed on 15/03/2021)।

3.5.6 जी.एस.टी. परिषद की संरचना

भारतीय संविधान में 101वें संशोधन ने अनुच्छेद 279ए डाला और राष्ट्रपति को जी.एस.टी. परिषद की स्थापना का अधिकार दिया। इस तरह जी.एस.टी. परिषद की स्थापना सिंतबर 2016 में हो गई थी। माल एवं सेवा कर परिषद में निम्नलिखित सदस्य होते हैं – (1) केन्द्रिय वित्त मंत्री, अध्यक्ष के तौर पर, (2) केन्द्रिय राज्य मंत्री जो कि राजस्व एवं वित्त का इंचार्ज होता है, वह सदस्य होता है, (3) और वित्त वह मंत्री जिस पर विला मंत्री अथवा कर लगाने का कार्यभार हो या अन्य मंत्री जिन्हें राज्य सरकार द्वारा नामित किये गये हो वे जी.एस.टी. परिषद के सदस्य होंगे। (अनुच्छेद 279ए) के अनुसार परिषद के सदस्य एक–दूसरे को उपाध्यक्ष चुन सकते हैं, ऐसी अवधि के लिये परिषद के रूप में वे तय कर सकते हैं। अंतर–राज्य पर माल और सेवा कर या वाणिज्य की आपूर्ति पर केन्द्र सरकार द्वारा लगाया जायेगा और एकत्र किया जायेगा। ऐसा कर संघ और राज्यों के बीच उस तरीके से लागू किया जा सकता है जिस तरीके से संसद द्वारा जी.एस.टी. परिषद की सिफारिशों द्वारा प्रदान किया जाता है {अनुच्छेद 269ए (1)}

जी.एस.टी. परिषद ने जी.एस.टी. दर, दर में छूट और सीमा कर एवं अन्य मामले को कम करने की सिफारिश की है। अनुच्छेद 279ए (7) के अनुसार, जी.एस.टी. परिषद के कुल सदस्यों की संख्या का आधा हिस्सा परिषद की बैठकों के लिये कोरम होता है। तीन–चौथाई सदस्यों जो कि उपस्थित और मतदान में हिस्सा लेते हैं उनके बहुमत से निर्णय लिया जाता है। केन्द्र सरकार के वोटों का वजन डाले गये कुल वोटों का दो–तिहाई होना (अनुच्छेद 279ए (9)। केन्द्र और राज्यों को यह सुनिश्चित करने की अपेक्षा की जाती है कि निर्यातक राज्य वस्तुओं एवं सेवाओं (SGST) के ऋण का हस्तांतरण करें जो कि केन्द्र द्वारा भुगतान के तौर पर प्रयोग किया जाता है। (Integrated Goods and Sarvies Tax) आई.जी.एस.टी. को केन्द्र एवं राज्य दोनों में 50:50 के अनुपात से बंटवारा किया जाता है। जी.एस.टी. को लागू करने की एवज में जो राजस्व का घाटा होता है उसे केन्द्र को राज्यों को मुआवजे के तौर पर अदा किया जाता है। जी.एस.टी. परिषद की सिफारिश पर संसद द्वारा राज्यों को जी.एस.टी. लागू करने की एवज में हुए नुकसान की भरपाई के लिये पाँच वर्षों तक मुआवजे का प्रावधान है।

जी.एस.टी. को लागू होने के बाद राज्यों की (सिवाय पेट्रोलियम, एल्कोहल, और सीमा शुल्क के) कर लगाने की शक्ति समाप्त हो गई हैं । राज्यों की वित्तिय स्थिति काफी गंभीर संकट में है इस कारण भुगतान में भी देरी होती है तथा पूँजी खर्चे में भी जबरदस्त कटौती देखी गई है। कोविड – 19 महामारी के फैलने के बाद लगे लॉकडाउन के कारण मार्च 2020 से राजस्व में गिरावट दर्ज की गई है। केन्द्र सरकार ने मुआवजा देने का वायदा किया जब जी.एस.टी. लागू होने के पश्चात् घाटा देखने को मिला। लेकिन 30 अगस्त 2020 को केन्द्र सरकार ने राज्यों को पैसा देने में अपनी असमर्थता जताई। वित्त मंत्री ने इस असमर्थता का कारण कोविड महामारी को बताया कि वह देवीय घटना ''Act of God'' थी।

जी.एस.टी. मुआवजे का भुगतान न करने पर राज्य हमेशा केन्द्र की आलोचना करते रहते है, क्योंकि सभी राज्य महामारी से लड़ने में व्यवस्त है, और इसके लिये समुचित धन का होना जरूरी है। अप्रैल 2020 से जी.एस.टी. राज्यों का भुगतान बकाया था। इस वर्ष का कुल 3 लाख करोड़ जी.एस.टी. मुआवजा की जरूरत, जबकि कुल शेष का लगभग 65,000 करोड़ ही एकत्र हुआ था, जो कि लगभग 2.35 लाख करोड़ कम था। (इंडियन एक्सप्रेस, 1 सितंबर 2020)।

3.6 केन्द्र और राज्य संबंधों को सुधारने के प्रयास : सरकारिया आयोग

केन्द्र–राज्य संबंधों की समीक्षा और सुधार के लिये कुछ प्रयास किये गये है। 9 जून, 1983 को केन्द्र सरकार ने केन्द्र राज्य संबंधों समीक्षा के लिये एक आयोग नियुक्त किया जिसके अध्यक्ष न्यायमूर्ति आर.एस. सरकारिया और श्री बी. शिवरमन और डा. एस. आर. सेन इसके सदस्य थे। इस आयोग को सरकारिया आयोग के नाम से जाना जाता है, जो इसके अध्यक्ष थे। सरकारिया आयोग ने अपनी सिफारिश जनवरी 1988 को सौंपी और इसमें 247 सिफारिशें शामिल थीं। आयोग ने संरनात्मक परिवर्तनों का समर्थन नहीं किया और न ही केन्द्र की शक्तियों को कम करने की सिफारिश की। हालांकि इसने संचालन पहलुओं में सुधार का सुझाव दिया। इसने कई सिफारिशें पेश की। इसकी महत्वपूर्ण सिफारिश अनुच्छेद 263 के तहत् अंतर–राज्य परिषद की

स्थापना करना है। समवर्ती सूची से संबंधित विषयों पर कानून बनाना और अनुच्छेद 356 का न्यूनतम उपयोग करने के संबंध में केन्द्र को राज्यों से पूर्व बातचीत की जरूरत है। सरकारिया आयोग की सिफारिश के आधार पर राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार ने 1990 में अंतर–राज्य परिषद की स्थापना की थी।

3.6.1 संविधान की कार्यप्रणाली की समीक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग (एनसीआरडब्ल्यूसी)

26 जनवरी 2000 को भारत के संविधान ने पचास साल के कामकाज को पूरा किया। बी.जे.पी. के नेतृत्व वाली एन.डी.ए. सरकार ने 22 फरवरी 2000 को भारत के संविधान की समीक्षा करने के लिये राष्ट्रीय आयोग की नियुक्ति की जिसका अध्यक्ष सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश एम. एन. वैंक्टचलैया थे। इसका उद्देश्य था कि पिछले पचास वर्ष के अनुभव के आधार पर कि किस प्रकार संविधान ने समय की जरूरत के अनुसार पर कैसे सबसे अधिक सम्भव बदलाव किया जाय। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि न्यायमूर्ति आर. एस. सरकारिया भी इस आयोग के सदस्य थे। आयोग ने 31 मार्च 2002 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें उन्होंने केन्द्र राज्य संबंधों पर कई सिफारिशें पेश की।

3.6.2 मदन मोहन पुंछी आयोग

27 अप्रैल 2007 को, भारत सरकार ने केन्द्र और राज्य संबंधों पर सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश मदन मोहन पुंछी की अध्यक्षता में एक आयोग गठित किया, जिसका कार्य केन्द्र–राज्य संबंधों की जाँच करना था। इस आयोग ने विधायी, प्रशासनिक और वित्तिय संबंधों की जाँच की और राज्यपाल की भूमिका, आपातकालीन प्रावधान, आर्थिक एवं सामाजिक योजना, पंचायती राज संस्थाओं, संसाधनों के बंटवारे जिनमें अंतर–राज्य नदी जल बंटवारा भी शामिल है जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों की जाँच की और समीक्षा की। इस आयोग ने 273 सिफारिशें प्रस्तुत की और अपनी रिपोर्ट 30 मार्च 2010 को भारत सरकार को सौंपी। (http://interstatecouncil.nic.in/first-administrative-reforms-commission/ accessed on 15/03/2021)।

अभ्यास प्रश्न 3

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) केन्द्र और राज्य संबंधों में वित्तिय संबंधों के वर्तमान घटनाक्रम की चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप केन्द्र और इसकी इकाइयों के बीच संघीय ढ़ाँचे में खासकर राज्यों से संबंधित विभिन्न प्रावधानों से परिचित हो गये होंगे। केन्द्र और राज्यों के बीच विधायी, कार्यकारी एवं वित्तिय शक्तियों के विभाजन का संविधान में प्रावधान किया गया है। आपातकाल के समय में केन्द्र सरकार को राज्यों पर नियंत्रण रखने एवं कानून बनाने का अधिकार है। इस प्रकार, भारतीय संविधान परंपरागत संघीय मॉडल से निकरल कर यह ''राज्यों का संघ'' जैसा कि संविधान की शुरुआत में ही कहा गया है, परिणित हो गया है। भारतीय संघीय ढ़ाँचा ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में भारत की विविधता और बिरूंगता की देखरेख के लिये बनाया गया है। अभी हाल ही के वर्षों में, जी.एस.टी. के लागू होने के बाद, केन्द्र एवं राज्यों के वित्तिय संबंध बदल गये हैं तथा इसने सिवाय सीमा शुल्क के सभी अप्रत्यक्ष करों को बदल दिया है। जी.एस.टी. परिषद की स्थापना जी.एस.टी. दर, छूट और कर तथा अन्य मामलों जैसे नये कर व्यवस्था की सिफारिश के लिये की थी। केन्द्र और राज्यों के संबंधों को लेकर कई प्रकार के सुधार किये गये जिनमें सरकारिया आयोग एक प्रमुख है।

3.8 संदर्भ

अरोड़ा, बलवीर एवं वर्नेय, डोगलास, 1995, *मल्टीपल आईडेंटीज इन ए सिंगल स्टेट : इंडियन फेडरेलिज्म इन ए कम्पेरेटिव परसपेक्टीव,* न्यू दिल्ली – कोनार्क।

अरोड़ा, बलवीर, कैलास के. के., सक्सेना रेखा, एवं सुआन, एव. खाम खान, – इंडियन फेडरेलिज्म इन के. सी. सूरी एवं अचिन विनायक *इंडियन डेमोक्रेसी आई सी एस एस आर रिसर्च सर्वे एन्ड, एक्सरलोरेरास इन पोलिटिकल साइंस* खंड 2 दिल्ली ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ऑस्टिन, ग्रेनविल – 1966 – *इंडियन कंस्टीट्यूशन कोर्नरस्टोन, ऑफ ऐ नेशन,* दिल्ली ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ऑस्टिन, ग्रेनविल – 1998 – *वर्किंग ए डेमोक्रेटिक कंस्टीट्यूशन – द इंडियन एक्सपीरिएंस,* न्यू–दिल्ली, ओ यू पी।

बक्सी, एम. पी. 2003, *द कंस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया,* न्यू–दिल्ली यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग।

बसु, डी.डी. 1997 – *इंट्रोडक्शन टू द कंस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया* न्यू दिल्ली – प्रेंरिस हाल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड।

कंस्टीट्यूऐंट, असैंबली डिवेट्स – ओफिसियल रिपोर्ट 1999 न्यू दिल्ली लोक सभा सचिवालय।

कंस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया – ओरिजिमल ऐक्ट – कोपीराइट 2000 भारत सरकार।

कश्यप, सुभाष 1998 *परस्पेक्टिव ऑन कंस्टीट्यूशन* न्यू दिल्ली शिप्रा प्रकाशन।

मुखर्जी, निर्मल एवं अरोड़ा बलवीर – *फेडरेलिज्म इन इंडिया : ओरिजिन एण्ड डेवलपमेंट,* विकास न्यू दिल्ली।

राव, शिवा, बी 1968 – *द फ्रेमिंग ऑफ इंडियाज कास्टीट्यूशन* – वोल्यूम 1, न्यू –दिल्ली आई. आई. पी. ए.।

व्हीयर के. सी. 1951 – *फेडरल गवर्नमेंट*, लंदन – ओ. यू. पी.।

Internet Sources

- The Goods and Service Tax Council website: http://www.gstcouncil.gov.in/
- The Inter-State Council website: **http://interstatecouncil.nic.in/**
- The Ministry of Law and Justice website: **https://lawmin.gov.in/**
- The Ministry of Home Affairs website: **https://www.mha.gov.in/**
- The Parliament of India website: **https://parliamentofindia.nic.in/**
- **The NITI Aayog website: http://niti.gov.in/**

3.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) भारतीय संविधान की 7वीं अनुसूची में केन्द्र और राज्यों के बीच कार्य एवं शक्तियों का वर्णन है। इसमें तीन सूचियाँ शामिल हैं 1) संघ सूची, 2) राज्य सूची एवं 3) समवर्ती सूची। केन्द्रिय संसद संघ सूची के विषयों पर कानून बनाने का अधिकार रखती है, जबकि राज्य सूची के विषयों पर राज्य विधान सभा कानून बना सकती है। समवर्ती सूची के विषयों में केन्द्र एवं राज्य दोनों कानून बना सकती है। समवर्ती सूची के विषयों पर कानून पर विवाद होने पर केन्द्रिय कानून मान्य होंगे।

अभ्यास प्रश्न 2

2) भारतीय संविधान ने राज्यों के ऊपर मजबूत केन्द्र की स्थापना की है। भारतीय संविधान के विभिन्न प्रावधानों के तहत केन्द्र सरकार राज्य की कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है। अनुच्छेद 256 के तहत् यह प्रावधान किया गया है कि राज्य अपनी कार्यपालिका शक्तियों का प्रयोग बिना केन्द्र के कानूनों की अवहेलना किये कर सकता है। अनुच्छेद 257 के तहत् केन्द्र राज्यों को निर्देश दे सकता है। अनुच्छेद 356 के तहत् केन्द्र राज्य में राष्ट्रपति शासन लगा सकता है। केन्द्र राज्य सरकार को कुछ कार्य भी सौंप सकता है। राष्ट्रपति राज्यपाल की नियुक्ति करता है और वह केन्द्र के दूत के रूप में कार्य करता है। अखिल भारतीय सेवाओं पर केन्द्र का पूरा नियंत्रण रहता है।

अभ्यास प्रश्न 3

3) भारत में नई कर प्रणाली जी.एस.टी. (माल एवं सेवा कर) को लागू किया गया है। संविधान का 122वाँ संविधान बिल संसद द्वारा पारित किया गया जिसमें, केन्द्र को कर एकत्र करने का अधिकार दिया गया है। यह बिल संसद द्वारा पारित किया और राज्यों द्वारा इसे अनुमोदित किया गया फिर राष्ट्रपति की अनुमति के पश्चात् यह 2016 में 101वाँ संशोधन सामने आया। इस अधिनियम के तहत् एक जी.एस.टी. परिषद की स्थापना हुई, यह परिषद जी.एस.टी. की दर, छूट तय करती है। जी.एस.टी. का बंटवारा केन्द्र एवं राज्यों के बीच जी.एस.टी. परिषद की सिफारिश के आधार पर किया जाता है।

इकाई 4 राज्य–स्थानीय संबंध*

संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 भारत के संविधान की रचना एवं पंचायती राज

4.3 भारत में स्थानीय शासन एक मील का पत्थर

4.3.1 सामुदायिक विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय विस्तार सेवाएँ

4.3.2 बलवंत राय मेहता समिति

4.3.3 अशोक मेहता समिति

4.3.4 जी.बी.के. राव समिति (1985)

4.3.5 एल.एम. सिंघवी समिति (1986)

4.4 संविधान का 73वाँ संशोधन अधिनियम, 1992

4.4.1 अनिवार्य प्रावधान

4.4.2 ऐच्छिक प्रावधान

4.5 ग्रामीण स्थानीय निकायों को शक्तियों का हस्तांतरण

4.6 संविधान का 74वाँ संशोधन (1992) अधिनियम और शहरी प्रशासन

4.7 शहरी स्थानीय निकायों की शक्तियों एवं कार्यों का हस्तांतरण

4.8 जिला योजना समिति

4.9 स्थानीय निकायों की कार्य प्रणाली

4.10 संदर्भ

4.11 सारांश

4.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

भारतीय संविधान ने केन्द्र, राज्य एवं स्थानीय स्तर पर लोकतांत्रिक सरकारों की स्थापना की है। इस इकाई में आप राज्य सरकारों एवं स्थानीय निकायों के बीच संबंधों का अध्ययन करेंगे, अर्थात संविधानिक प्रबंध और स्थानीय सरकारों का महत्व। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :–

- भारत में स्थानीय स्व–शासन की उत्पत्ति को समझा सकेंगे
- भारत में स्थानीय स्व–शासन के संविधानिक ढाँचे की चर्चा कर सकेंगे
- भारत में ग्रामीण एवं शहरी निकायों के सांविधानिक प्रावधानों की एवं 73वें व 74वें संविधान संशोधन अधिनियम के आधार पर विकेन्द्रिकरण के संबंधित तरीकों की व्याख्या कर सकेंगे।

* डॉ. डी. आनंद, एसोसिएट प्रोफ्रेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली – 110068

4.1 प्रस्तावना

भारतीय संविधान के अंतर्गत भारत में दो प्रकार की स्थानीय शासन प्रणाली है, पंचायत ग्रामीण क्षेत्रों के लिये तथा नगर पालिकाऐं शहरी क्षेत्रों के लिये। प्रारंभ में भारतीय संविधान ने केन्द्र और राज्यों के बीच में शक्तियों के विभाजन का स्पष्ट प्रावधान किया गया है। आपने इकाई संख्या 3 में इसके बारे में विस्तृत तौर पर समझा होगा। बाद में 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन के तहत् त्रि–स्तरीय सरकारों की स्थापना की गई थी। 73वें संविधान संशोधन 1992 के अंतर्गत पंचायतों को सांविधानिक दर्जा प्रदान किया गया। ऐसा संविधान में एक नया भाग 9 जोड़कर तथा 11वीं सूची को जोड़कर किया गया। इसी प्रकार, 74वें संशोधन के अंतर्गत शहरी निकायों अर्थात नगरपालिकाओं को संविधान का दर्जा दिया गया एवं इन्हें एक नए भाग 9 (अ) और 12वीं अनुसूची में रख कर किया गया। इस प्रकार अब प्रत्येक राज्य में त्रि–स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना की गई है :

1) ग्राम स्तर पर पंचायत,
2) मध्य स्तर पर ब्लॉक या तालुक पंचायत, तथा
3) जिला स्तर पर जिला परिषद या जिला पंचायत।

ग्रामीण स्थानीय निकायों के अलावा प्रत्येक राज्य में शहरी निकायों के भी तीन प्रकार के निकायों की व्यवस्था की गई है:

1) सवंमित क्षेत्र में नगर पंचायत
2) छोटे शहरी क्षेत्र में नगर परिषद
3) बड़े शहरी क्षेत्रों में नगर निगम

अब हम भारत में स्थानीय स्व–शासन के विचार एवं इसकी उत्पत्ति के बारे में विस्तृत चर्चा करेंगे।

4.2 भारत के संविधान की रचना एवं पंचायती राज

भारत के संविधान की रचना करने के लिये संविधान सभा की प्रथम बैठक 9 दिसंबर 1946 को शुरू हुई थी। संविधान सभा के सदस्यों के सामने प्रमुख दायित्व था भारत को आर्थिक पुनर्गठन का दृष्टिकोण प्रदान करना। आर्थिक पुनर्गठन का मतलब था भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बदलना तथा वैज्ञानिक एवं विकास के मॉडल के आधार पर कृषि एवं उद्योग को परिवर्तन करना था। इसका यह भी आशय था कि ऐसी आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करना जो कि लोगों के कल्याणकारी कार्य के लिये हो, असमानताओं को दूर करे, जीवन की जरूरतों को पूरा करे, और जीवन की सुगमताओं को पूरा करे। महात्मा गाँधी ग्राम स्वराज्य के पूर्ण समर्थक थे। इस संदर्भ में, संविधान सभा के गाँधी समर्थकों ने ग्राम पंचायतों की महत्ता पर जोर दिया एवं भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को बहाल करने पर जोर दिया जो पंचायती राज व्यवस्था के आधार पर हो। गांधी जी राजनीति एवं आर्थिक विकेन्द्रिकरण के मुख्य पुरोधा थे, अर्थात ग्राम आधारित पंचायत व्यवस्था के समर्थक थे।

श्रीमननारायण अग्रवाल जो कि एक वरिष्ठ गाँधीवादी थे, उन्होंने गाँधीवादी मॉडल संविधान तैयार किया था और उसे संविधान सभा के समक्ष अनुमोदन के लिये प्रस्तुत किया था। इस मॉडल में यह सुझाव दिया गया कि पंचायती राज संस्थाओं को प्राथमिक इकाई के तौर पर अपनाया जाना चाहिये। इसमें यह भी सुझाव था कि पंचायतों के क्षेत्राधिकार में ऐसे विषय होने चाहिये जिनका संबंध कानून एवं व्यवस्था, भू–राजस्व, को–ओपरेटिव, ग्राम उद्योग इत्यादि हो। इसमें यह भी सुझाव दिया गया कि तालुक एवं जिला पंचायत स्तर पर प्रत्यक्ष चुनाव की इकाइयाँ होनी चाहिये। इन इकाइयों को सलाहकारी कार्य करने चाहिये तथा जिला नगरपालिकाओं और पंचायतों के सदस्यों को अखिल भारतीय स्तर पर लिया जाना चाहिये। अरूण चंद्र गुहा, प्रसिद्ध गाँधीवादी थे। उन्होंने संविधान सभा में गाँधीवादी मॉडल की प्रमुख विशेषताओं को रेखांकित किया जिसमें ग्राम पंचायतों को महत्व दिया गया। उन्होंने कहा ''हमें यह सिखाया गया कि ग्राम पंचायतें भविष्य में प्रशासनिक मशीनरी का आधार बनेंगी। गाँधीवादी और कांग्रेस का दृष्टिकोण इस मामले में समान था कि भारत का भविष्य का संविधान एक पिरामिड की रचना के रूप में होगा और इसका आधार ग्राम पंचायतें होंगी'' (सी.ए.डी. खंड–VII : अंग्रेजी संस्करण में पेज संख्या, अनुवाद, 256)। गाँधीवादी संविधान के ब्लूप्रिंट जिसने ग्राम पंचायतों को सामाजिक और आर्थिक इकाई की प्राथमिकता के तौर पर देखा, को संविधान सभा में कम कर्मयन मिला। संविधान के मसौदे को संविधान सभा में पेश करते हुए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा था कि ''मेरा मत है कि ग्राम पंचायतें भारत की बर्बादी का प्रतीक है। और मुझे आश्चर्य चकित हो रहा है कि जो लोग प्रांतवाद एवं संप्रदायवाद का विरोध कर रहे थे वे ही ग्राम पंचायतों के चैम्पियन बन रहे हैं। उनके अनुसार ग्राम क्या हैः– ''ये स्थानीयता गढढ़ा है, अज्ञानता की मांद है, संकीर्ण मानसिकता है तथा सांप्रदायिकतावादी है।'' (सी.ए.जी., वोल्यूम– VII, 38)। हालांकि विकेन्द्रियकृत पंचायती राज आधारित गाँधीवादी मॉडल संविधान में तथा संविधान सभा में व्यापक समर्थन नहीं मिला, पंचायती राज के गाँधीवादी सिद्धांतों को नीति–निर्देशक सिद्धांतों में जगह प्रदान की गई। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 के तहत् इन्हें जगह मिली। अनुच्छेद 40 के अनुसार, राज्य ग्राम पंचायतों को संगठित करने और उन्हें ऐसी शक्तियों प्रदान करने के लिये कदम उठायेगा जो स्व–शासन की इकाई के वह रूप में कार्य करने के लिये उन्हें सक्षमक रने के लिये आवश्यक हो सकते हैं।

4.3 भारत में स्थानीय सरकारों के मील के पत्थर

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की अवधि में पंचायतों ने भारत में शासन के स्थानीय स्तर पर सार्वजनिक नीतियों के क्रियान्वयन एवं विस्तार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इकाई का यह खंड भारत में स्थानीय शासन के कुछ मील के पत्थर से संबंधित है।

4.3.1 सामुदायिक विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय विस्तार सेवाऐं

सामुदायिक विकास कार्यक्रम 2 अक्टूबर, 1952 को शुरू किये गये थे, जो कि गाँधीजी के जयंती का दिन था। यह स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पहला कार्यक्रम था, जिसका लक्ष्य था स्थानीय विकास की गतिविधियों में लोगों की भागीदारी को बढ़ावा देना। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय में सबसे अधिक ध्यान ग्रामों को दिया गया। तथा योजना दस्तावेज में इस बात पर अधिक बल दिया गया कि पंचायतें अपने नागरिकों के लिये संतोषजनक ढंग से कार्य तभी कर पायेंगी जब वे विकास की एक सक्रिय

प्रक्रिया के साथ जुड़ी हों। जब तक कोई ग्रामीण एजेंसी जिम्मेदारी नहीं ले सकती और विकास के लिए पहल नहीं कर सकती वे ग्रामीण जीवन पर असर नहीं कर सकती। समग्र रूप से समुदाय का प्रतिनिधित्व करने वाला ग्राम संगठन ही आवश्यक नेतृत्व प्रदान कर सकता है (पहली पंचवर्षीय योजना)।

1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरुआत के एक साल बाद सरकार ने राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं को शुरू करने का फैसला किया। ये 2 अक्तूबर, 1953 को शुरू की गई थी। राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं को उन क्षेत्रों में लागू किया गया था जिन्हें सी.डी.पी. ने कवर नहीं किया था। राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं का मुख्य उद्देश्य ग्रामीणों को वैज्ञानिक और तकनीक सहायता प्रदान करना था ताकि उनकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार किया जा सके। राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं की शुरुआत के बाद, यह संभावना व्यक्त की गई कि ग्रामीण समाज को लक्षित करने वाली विकास नीतियों से पूरे देश को लाभ होगा।

4.3.2 बलवंत राय मेहता समिती

सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के लागू होने के पाँच वर्ष बाद, योजना आयोग ने 16 जनवरी, 1957 को एक कमेटी का गठन किया जिसे हम बलवंत राय मेहता समिति के नाम से जानते हैं। इस समिति के अध्यक्ष बलवंत राय मेहता थे और इस समिती का कार्य सामुदायिक विकास कार्यक्रम एवं राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं के प्रभाव का आकलन करना था। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट 24 नवंबर 1957 को सौंप दी और इसने त्रि–स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना की सिफारिश की थी : 1) ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, 2) ब्लॉक या तालुक स्तर पर पंचायत समिति, तथा 3) जिला स्तर पर जिला परिषद की। इस स्थिति की अन्य सिफारिशों में महत्वपूर्ण सिफारिशों के अनुसार है सरकार को इन इकाइयों को पूर्ण स्वायत्ता देनी चाहिये ताकि ये अपनी जिम्मेदारियाँ तथा कर्त्तव्य ठीक से निभाऐं। इसके क्षेत्राधिकार में सभी विकास कार्य, संपन्न होने चाहिए तथा सरकार को केवल सलाह, निरीक्षक एवं उच्च योजना तक ही सीमित रहना चाहिये। इस समिति ने यह भी सिफारिश की थी कि एक आत्म–शासन संस्था का गठन भी किया जाना चाहिये ताकि यह ब्लॉक स्तर पर समन्वय बनाया जा सके तथा पंचायत समितियों का चुनाव अप्रत्यक्ष तौर पर किया जाना चाहिये।

4.3.3 अशोक मेहता समिती

केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार बनने के बाद, केन्द्र ने एक समिती का गठन किया जिसे अशोक मेहता समिती के नाम से जाना जाता है। इसका गठन दिसंबर 1977 में किया गया था जिसने भारत में पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने के उपायों का सुझाव दिया था। इस समिती ने अपनी सिफारिशें अगस्त 1978 में सौंपी जिसमें पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने के संबंध में 132 सिफारिशें थी। इस समिती की महत्वपूर्ण सिफारिशें इस प्रकार थी : त्रि–स्तरीय व्यवस्था के स्थान पर इसने द्वि–स्तरीय व्यवस्थाकी सिफारिश की अर्थात जिला स्तर पर जिला परिषद तथा कुछ गाँवों को मिलाकर जिनकी जनसंख्या 15000 से 20,000 हो, मंडल पंचायत का गठन किया जाना चाहिये। अशोक महता समिति के अनुसार विकेन्द्रिकरण का प्रमुख केन्द्र जिला होना चाहिये, जिला परिषद एक कार्यकारी निकाय होना चाहिये जिसकी जिम्मेदारी जिला स्तर पर योजना बनाना हो, तथा पंचायती राज संस्थाओं को कर

लगाने की पूर्ण शक्ति मिलनी चाहिये ताकि ये अपने वित्तीय संसाधनों को एकत्र कर सके।

4.3.4 जी. वी. के. राव समिति (1985)

जी. वी. के. राव समिती की नियुक्ति योजना आयोग द्वारा 1985 में की गई थीं। इसका प्रमुख कार्य पंचायती राज संस्थाओं के विभिन्न पहलुओं को देखना तथा गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के प्रशासनिक प्रबंधों को देखना था। इस समिती की प्रमुख सिफारिशों में शामिल थीं: पंचायती राज संस्थाओं को सभी स्तरों पर जिला, तालुक एवं ग्राम स्तर पर आवश्यक समर्थन प्रदान करना, स्थानीय योजना–कार्य की जिम्मेदारी देना, तथा ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की निगरानी एवं कार्यान्वयन करना।

4.3.5 एल. एम. सिंघवी समिति (1986)

राजीव गाँधी सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं की समस्याओं के अध्ययन करने के लिये 1986 में एल. एम. सिंघवी समिती का गठन किया था। सिंघवी समिती की महत्वपूर्ण सिफारिशों में स्थानीय स्व–शासन को सांविधानिक दर्जा देने तथा संविधान में एक नया अध्याय जोड़ने की बात शामिल थी। इस समिती ने पंचायतों के चुनावों में राजनीतिक दलों की भागीदारी नहीं होने की भी सिफारिश की थी। लेकिन पंचायती राज संस्थाओं को सांविधानिक दर्जा प्रदान करने के लिए राजवी गाँधी सरकार ने महत्वपूर्ण कदम उठाये थे।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) बलवंत राय मेहता समिती की महत्वपूर्ण सिफारिशें कौन–कौनसी थीं?

.....

.....

.....

.....

.....

4.4 संविधान का 73वाँ संशोधन अधिनियम, 1992

पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा 2 अक्तूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में किया गया था। उसके बाद विभिन्न राज्यों ने भी पंचायती राज व्यवस्था को लागू किया। लेकिन 73वें संविधान संशोधन तक पंचायती राज व्यवस्था को सांविधानिक दर्जा न मिलने के कारण उतना अधिक महत्व नहीं दिया जाता था। इसके अलावा नियमित चुनाव की कमी, कमजोर तबकों जैसे कि एस.सी., एस.टी., महिलाओं के प्रतिनिधित्व में कमी शक्तियों का अपर्याप्त विभाजन, और वित्तीय संसाधनों की कमी, कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जो कि पंचायती राज संस्थाओं की कमियों में शामिल है। इन कमियों को दूर करने के लिये जुलाई 1989 में, राजीव गाँधी सरकार ने संसद में 64वाँ विधेयक संशोधन अधिनियम पेश

किया। लेकिन यह विधेयक राज्य सभा में पराजित हो गया। बाद में, विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व में राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने 74वाँ संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया, लेकिन यह कानून नहीं बन सका, क्योंकि 9वीं लोकसभा भंग हो गई थी। लेकिन अंत में, 1992 में 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम पारित हो गया और पंचायती राज संस्थाओं को संविधानिक दर्जा प्रदान किया गया। उस समय पी. वी. नरसिंह राव की सरकार थी। उसके बाद से 24 अप्रैल को राष्ट्रीय पंचायती राज दिवस मनाया जाता है। भारतीय संविधान की 7वीं अनुसूची में स्थानीय शासन राज्य का विषय है। इसलिये राज्य सरकारों को राज्य स्तर पर कानून बनाने चाहिये। राजस्थान उन अग्रणी राज्यों में से है जहाँ पर पंचायती राज संस्थाओं को लागू किया गया। वहाँ पर त्रि–स्तरीय व्यवस्था ग्राम, ब्लॉक तथा जिला परिषद अधिनियम 1959 के तहत् सितंबर–अक्टूबर 1959 में राज्य में चुनाव संपन्न हुए। राजस्थान में ही पहली बार नागौर जिले में 2 अक्तूबर 1959 को पंचायती राज संस्थाओं का उद्घाटन उस वक्त के प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा किया गया था। उसके बाद विभिन्न राज्यों में भी इसे लागू किया गया था। 73वें संशोधन के बाद संविधान में भाग 9 जोड़ा गया, जो कि अनुच्छेद 243 से 2430 तक है। इसमें पंचायतों से संबंधित उनके कार्य एवं शक्तियों का विस्तृत विवरण दिया गया है।

4.4.1 अनिवार्य प्रावधान

73वें संविधान संशोधन के अंतर्गत प्रमुख विशेषताओं में अनिवार्य प्रावधान शामिल है। अनिवार्य प्रावधानों में लोगों की भागीदारी को स्थानीय स्तर पर बढ़ाने का प्रावधान है। इनमें :– 1) ग्राम सभा का गठन करना, 2) मध्य स्तर पर पंचायतों की स्थापना (अनुच्छेद 243–बी), 3) सभी स्तरों पर प्रत्यक्ष चुनाव की व्यवस्था (अनुच्छेद 243–सी), 4) जिला स्तर एवं मध्यम स्तर पर अध्यक्ष के पद पर अप्रत्यक्ष चुनाव की व्यवस्था (अनुच्छेद, 243 सी), 5) महिलाओं के लिये एक तिहाई आरक्षण की व्यवस्था, 6) पंचायत चुनाव लड़ने के लिये कम से कम 21 वर्ष की आयु, 7) सभी स्तरों पर एससीडा, एसटीडा के लिए सीटों और अध्यक्ष पदों में आरक्षण का प्रावधान (अनुच्छेद 243 डी), 8) पंचायतों का निश्चित कार्यकाल पाँच वर्ष का होना, यदि पंचायतों का विघटन हो तो पुनः चुनाव करवाना (अनुच्छेद 243 ई)।

इस संशोधन में राज्य स्तर पर दो आयोगों के गठन की भी व्यवस्था की गई है। वे हैं– 1) राज्य चुनाव आयोग अनुच्छेद 243 K, यह एक स्वतंत्र निकाय है, जिसका कार्य स्थानीय निकायों के चुनाव कराना एवं निरीक्षण करना, 2) राज्य वित्त आयोग (अनुच्छेद 243 I) इसका कार्य है पंचायतों की वित्तिय स्थिति की समीक्षा करना और राज्यपाल को राज्य एवं पंचायतों के बीच करों का वितरण करना भी शामिल है। इसमें राज्यों की संचित निधि से अनुदान भी शामिल है।

4.4.2 ऐच्छिक प्रावधान

पंचायती राज संस्थाओं के अधिनियम कुछ ऐच्छिक प्रावधान है– 1) संसद और राज्य विधानसभाओं के सदस्यों को अपने क्षेत्रों में पंचायतों में प्रतिनिधित्व प्रदान करना, 2) स्थानीय निकायों के सभी स्तरों पर पिछड़े वर्गों के लिये अध्यक्ष एवं अन्य पदों पर आरक्षण प्रदान करना, 3) ग्राम सभा को शक्तियाँ प्रदान करना ताकि वह स्व–शासन के तौर पर ग्राम स्तर पर कार्य कर सके। (अनुच्छेद, 243 अ), 4) पंचायतों को विकास एवं सामाजिक न्याय संबंधी 29 विषयों में जो कि 11वीं अनुसूची में दर्ज है शक्तियों

का हस्तांतरण करना चाहिये (अनुच्छेद 243 जी), 5) पंचायतों को वित्तीय शक्तियाँ प्रदान करना (अनुच्छेद 243 एच)।

इसका उद्देश्य उनके संसाधनों में वृद्धि करना, खासकर तमाम प्रकार के कर, शुल्क, ड्यूटी, यातायात कर इत्यादि लगाकर उनके वित्तीय संसाधनों में बढ़ोतरी करना इत्यादि था। राज्यों ने नये अधिनियमों को लागू कर दिया या उनके कानूनों में 73वें संशोधन के अनुसार आवश्यक परिवर्तन कर दिया था। इसके परिणामस्वरूप अब उन राज्यों में सार्वभौम तौर पर त्रि–स्तरीय पंचायती राज संस्थाओं का ढाँचा है। ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत है जिसमें गाँव आते है, मध्यम स्तर पर तालुक या ब्लॉक समिती (पंचायत समिती) और जिला स्तर पर जिला परिषद जिसका पूरे जिले में अधिकार क्षेत्र होता है। हालांकि जिन राज्यों की जनसंख्या 20 लाख से कम है वहाँ पर पंचायत समिती नहीं है।

भारत के संविधान में पंचायतों से संबंधित भाग 9 के प्रावधान पाँचवे अनुसूचित क्षेत्रों पर लागू नहीं होते। लेकिन संसद को यह अधिकार है कि वह इन प्रावधानों को बिना किसी संशोधन के अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार कर सके है। इसके अनुसार, संसद ने 1996 में पंचायत विस्तार कानून भी बनाया था। इस कानून को पेसा (PESA) कानून के नाम से जाना जाता है। पेसा कानून का प्रमुख उद्देश्य अनुसूचित क्षेत्रों तक पंचायतों के प्रावधानों का विस्तार करना था। इसमें इन क्षेत्रों की जरूरतों के हिसाब से ढील दी गई थी।

4.5 ग्रामीण स्थानीय निकायों को शक्तियों का हस्तांतरण

संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम 1992, ने 24 अप्रैल, 1993 से संविधान में 11वीं अनुसूची को जोड़ा था। यह अनुसूची विशेष शक्तियों एवं उत्तरदायित्वों से संबंधित है। इसमें 29 विषय शामिल है जो काफी महत्वपूर्ण एवं व्यापक है (अनुच्छेद 243 जी) ये विषय इस प्रकार है :– 1) कृषि, जिसमें कृषि विस्तार भी शामिल है, 2) भूमि सुधार, भूमि सुधार लागू करना, भूमि अधिग्रहण और मृदा संरक्षण, 3) लघु सिंचाई, जल प्रबंध तथा जलाशय विकास, 4) पशु पालन, डेयरी तथा मुर्गी पालन, 5) मछली पालन, 6) सामाजिक वानिकी और फार्म वानिकी, 7) लघु वन उत्पादन, 8) लघु उद्योग, जिसमें खाद्य प्रोसेसिंग उद्योग भी शामिल है, 9) खादी, ग्राम और कुटीर उद्योग, 10) ग्रामीण आवास, 11) पेयजल, 12) ईंधन और चारा, 13) सड़क, पुल निर्माण, जल निकासी, पुलिया, घाट निर्माण, तथा आवागमन के अन्य साधन, 14) ग्रामीण विद्युतीकरण, जिसमें बिजली वितरण भी शामिल है, 15) गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोत, 16) गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, 17) शिक्षा, जिसमें प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा भी शामिल है, 18) तकनीकी प्रशिक्षण एवं वोकेशनल शिक्षा, 19) प्रौढ़ एवं अनौपचारिक शिक्षा, 20) पुस्तकालय, 21) सांस्कृतिक गतिविधियाँ, 22) बाजार तथा मेले, 23) स्वास्थ्य एवं सफाई, जिसमें अस्पताल प्राथमिक उपचार केन्द्र और डिस्पेंसरी भी शामिल है, 24) परिवार कल्याण, 25) महिला और बाल विकास, 26) समाज कल्याण, जिसमें विकलांग एवं मानसिक रोगी के कल्याण भी शामिल है, 27) कमजोर वर्गों का कल्याण, विशेषकर अनु. जाति एवं अनु. जनजाति, 28) जन वितरण व्यवस्था, 29) सामुदायिक संपत्तियों का रख रखाव (भारतीय संविधान की 11वीं अनुसूची)।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) ग्रामीण शासन में ग्राम सभा का क्या महत्व हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4.6 74वाँ संशोधन (1992) और शहरी प्रशासन

जैसा कि ग्रामीण स्थानीय शाखा के लिये 73वाँ संशोधन लाया गया था उसी प्रकार से 74वाँ संविधान संशोधन अधिनियम शहरी निकायों को संविधान का दर्जा देने के लिये लाया गया था। 74वें संविधान संशोधन को संसद ने 1992 में पारित किया था। इस संशोधन के बाद संविधान में नया भाग 9 (अ) जोड़ा गया था। जोकि अनुच्छेद 243–पी से 243–जेडजी तक नगरपालिकाओं के प्रावधान से संबंधित है। ये नगरपालिकाओं के कार्य एवं शक्तियों को परिभाषित करते हैं। यह अधिनियम शहरी निकायों के सामान्य ढांचे तथा अधिकृत पत्र प्रदान करता है। सरकार के 1993 में इन संशोधन का अध्यादेश लागू किया था और 74वाँ संशोधन अधिनियम बनकर सामने आया था।

यह अधिनियम में तीन प्रकार की नगरपालिकाओं का प्रावधान किया गया हैः 1) नगर पंचायत, 2) नगर परिषद तथा (3) बड़े शहरों के लिए नगर निगम। नगरपालिकाओं के सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा किया जाता है। इसके लिए सभी क्षेत्रों को वार्ड में बांटा जाता है। छोटी नगरपालिकाओं में प्रत्येक वार्ड में 1500 से 6000 तक जनसंख्या होती है, जबकि बड़ी नगरपालिकाओं में या शहरों में इन वार्डों की जनसंख्या 30,000 से 2 लाख तक भी हो सकती है। राज्य विधान सभा को यह अधिकार है कि वह नगरपालिकाओं के अध्यक्षों के चुनाव की प्रक्रिया तय कर सके। इस अधिनियम में सभी स्तरों पर एस.सी., एस.टी. एवं महिलाओं के लिए आरक्षण का भी प्रावधान किया गया है। लोक सभा सदस्य तथा विधान सभा सदस्य भी इस क्षेत्र के सदस्य होते हैं जहाँ पर यह नगरपालिका आती है। राज्य विधानसभा तथा नगरपालिकाओं के अध्यक्षों के चुनाव की प्रक्रिया के लिए अधिकृत की गई है। नगरपालिका निकायों का कार्यकाल पाँच वर्ष का है तथा राज्य चुनाव आयोग चुनाव संपन्न कराता है। यदि पाँच वर्ष नगरपालिकाऐं विघटित हो जाए तो छः महिने के अंतर्गत चुनाव करवाना अनिवार्य है। लेकिन इस नगरपालिका का कार्यकाल पूर्व की नगरपालिका के बचे हुए कार्यकाल तक ही होगा। यदि नगरपालिकाओं का कार्यकाल मात्र छः महिना बचा है तो चुनाव कराना आवश्यक नहीं है।

4.7 शहरी निकायों के कार्य एवं शक्तियाँ हस्तांतरण करना

शहरी स्थानीय शासन पूर्ण रूप से सरकार के नियंत्रण से मुक्त नहीं है। शहरी निकायों को भी राज्य के अधीन ही कार्य करना पड़ता है, तथा राज्य नगरपालिका कानून के नियमों के अनुसार ही कार्य करने की छूट है। संविधान के अनुच्छेद 243–डब्ल्यू का संबंध नगरपालिकाओं की शक्तियों एवं कार्यों से है। उन्हें उन शक्तियों या कार्यों का अधिकार दिया गया है जो कि स्थानीय सरकार के अंतर्गत आते हैं। नगरपालिकाओं की शक्तियों एवं कार्यों को संविधान की 12वीं अनुसूची में रखा गया है। इसमें कुल 18 विषय शामिल हैं जो कि नगरपालिकाओं के कार्यक्षेत्र में आते है। ये विषय इस प्रकार है :–

1) शहरी योजना, इसमें टाउन योजना भी शामिल है।
2) भू–उपयोग पर रेगूलेशन बनाना तथा भवन निर्माण।
3) आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिये योजना।
4) रोड़ एवं पुल बनाना।
5) घरेलू, औद्योगिक एवं व्यावसायिक उद्देश्य के लिए जल आपूर्ति।
6) जन स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं ठोस मृदा प्रबंधन।
7) अग्नि सेवाऐं।
8) शहरी वानिकी, पर्यावरण की सुरक्षा और परिवेश को बढ़ावा देना।
9) समाज के कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा करना इसमें विकलांग एवं मानसिक रोगी भी शामिल है।
10) झुग्गी बस्तियों में सुधार करना एवं पक्का करना।
11) शहरी गरीबी उन्मूलन।
12) शहरी सुविधाऐं का प्रावधान जैसे कि पार्कों का निर्माण, मार्डन एवं खेल–कूद का स्थान।
13) सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं नैतिक पहलुओं का बढ़ावा देना।
14) श्मशान घाट, कब्रिस्तान, विद्युत शव–दाह ग्रह का निर्माण करना।
15) मवेशियों के तालाब बनाना तथा जानवरों की हिंसा को रोकना।
16) महत्वपूर्ण आँकड़े, इसमें जन्म एवं मृत्यु पंजीकरण शामिल है।
17) जन–सुविधाऐं जिसमें स्ट्रीट लाइट, पार्किंग स्थल, बस स्टोप तथा जन सुविधाऐं शामिल है।
18) कसाईघर बनाने का कानून बनाना (संविधान की 12वीं अनुसूची)।

अभ्यास प्रश्न 3

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) 74वें संविधान संशोधन अधिनियम के महत्व को समझाइये।

.....

.....

.....

.....

.....

4.8 जिला योजना समितियाँ

अनुच्छेद 243–जडडी के अंतर्गत जिला आयोग समितियों के गठन का प्रावधान किया गया है ताकि वे ग्रामीण एवं शहरी निकायों के लिये योजना तैयार कर सके। राज्य विधानसभा ऐसी समितियों के गठन का मसौदा तैयार करती है। किसी जिले में जिला पंचायत और नगर पालिकाओं के निर्वाचित सदस्यों के कम से कम चौथा–पाँचवा हिस्सा निर्वाचित होना चाहिये। इसका प्राथमिक उद्देश्य पंचायतों द्वारा तैयार की गई योजनाओं को समेकित करना और जिले में विकास योजना का मसौदा तैयार करना है। उसके बाद राज्य सरकार को भेजा जाता है। इसी प्रकार प्रत्येक महानगरीय क्षेत्र में एक महानगरीय योजना समिती होगी जो कि विकास योजना का मसौदा तैयार करेगी।

4.9 स्थानीय निकायों की कार्य प्रणाली

राज्य सरकार स्थानीय निकायों पर नियंत्रण रखती है। सरकार स्थानीय निकायों के प्रस्तावों को संशोधित या अस्वीकार कर सकती है। राज्य सरकार कुछ परिस्थितियों में स्थानीय निकायों के सदस्यों को निर्धारित प्रक्रियाओं के माध्यम से हटा भी सकती है। राज्य सरकारें समय–समय पर निरीक्षण भी करती है। राज्य सरकार स्थानीय निकायों द्वारा पारित अविश्वास प्रस्ताव को लागू करती है तथा इन निकायों को अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत भंग भी कर सकती है। पंचायतों का कार्य क्षेत्र के लिये वार्षिक योजनाऐं तैयार करना है। ग्राम सभा एक विचारशील और निर्णय लेने वाली संस्था के रूप में कार्य करती है। पंचायतों को भी कर लगाने एवं जमा करने की शक्तियां प्राप्त है। यह वार्षिक बजट पारित करती है तथा गाँव की प्रमुख समस्याओं पर चर्चा करती है। यह लाभार्थी के रूप में विभिन्न व्यक्तियों का चयन एवं पहचान के लिये भी जिम्मेदार है, जो कि केन्द्र एवं राज्य गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों से संबंधित है। यह निचले स्तर पर प्रत्यक्ष लोकतंत्र एवं प्रशासन के लिए भी जानी जाती है। सभी सामाजिक समूह, जिसमें वंचित वर्ग भी शामिल है, ग्राम सभा की बैठकों में हिस्सा ले सकते हैं। ग्राम सभा के क्रियाशील होने की वजह से पारदर्शी प्रशासन एवं सहभागी लोकतंत्र को प्राप्त किया जा सकता है।

लेकिन ज्यादातर गाँवों में, ग्राम सभा के बैठकें मात्र औपचारिक तौर पर होती है। कई गाँवों में, दबंग समुदाय के लोग एस.सी., एस.टी. या ओ.बी.सी. समुदाय के चुने हुए प्रतिनिधियों को अपनी डयूटी स्वतंत्र रूप से नहीं करने देते। कई ऐसे उदाहरण है जहाँ पर महिलाओं के पति या अन्य परिवार के सदस्य परोक्ष रूप से निर्णय लेते हैं। यद्यपि पंचायतों के चुनाव गैर राजनीतिक दलों के आधार पर होता है, लेकिन राजनीतिक दल परोक्ष रूप से किसी स्वतंत्र उम्मीदवार का समर्थन करते हैं या उनके लिये चुनाव प्रचार करते हैं। क्योंकि राजनीतिक दल तथा उनके नेता इन चुनावों को

जीतना जरूरी समझते हैं क्योंकि ये एम.पी. एवं एम.एल.ए. के चुनावों में प्रभाव डालते हैं। राजनीतिक दल ऐसे लोगों को अपना समर्थन देते हैं जो कि बाद में वे अपना वोट बैंक बना सके। साधारण जनता इन लोकल नेताओं पर निर्भर करती हैं ताकि उन्हें कल्याणकारी नीतियों का फायदा मिल सके। जो पार्टी स्थानीय निकायों पर अपना नियंत्रण रखती है वह ऐसे लोगों की पहचान करती है जो कि अपना समर्थन दे सके तथा कल्याणकारी नीतियों में उनका फायदा पहुंचा सकें। राज्य सरकारें लोकल सदन नीतियों का प्रयोग करते हैं, जैसे कि मुफ्त राशन देना, सस्ते चावल एवं गेहूँ देना, मुफ्त में रंगीन टी.वी. देना, मिक्सी देना, धोती तथा साड़ी देना, सस्ते मकान देना, मुफ्त में शिक्षा देना, फीस माफ करना, छात्रवृत्ति देना तथा किसानों को मुफ्त बिजली देना इत्यादि शामिल है। ये सब स्थानीय नेताओं जैसे कि सरपंच, तालुक सदस्य, एम.पी., एम.एल.ए. द्वारा किया जाता है ताकि उन्हें चुनावों में फायदा मिल सके। इसके अलावा जिन स्थानीय नेताओं का बड़े नेताओं तक संपर्क है वे अपने लिए टिकट लेने की कोशिश करते हैं ताकि विधानसभा या लोक सभा का चुनाव भी लड़ सके।

स्थानीय निकायों के पास योजनाओं एवं कार्यक्रमों को चलाने के लिये पर्याप्त मात्रा में फंड नहीं है। पंचायत प्रमुख तौर पर राज्य या केन्द्र सरकार से अनुदान पर निर्भर है। अनुदान का बड़ा हिस्सा जो कि राज्य या केन्द्र सरकार से मिलता है वह किसी योजना विशेष के लिये होता है। स्थानीय राजस्व की प्राप्ति बहुत ही कम या बिल्कुल नहीं होती। यहाँ तक कि राज्य सरकारें भी अपना राजस्व केन्द्र पर ही निर्भर है। और ये सब अपना हिस्सा जी.एस.टी. के माध्यम से पूरा करती है। राज्य सरकार स्थानीय निकायों को फंड नहीं देती क्योंकि उनकी वित्तीय स्थिति ठीक नहीं है। ये वित्तीय निर्भरता एवं अपर्याप्त संसाधनों की वजह से स्थानीय निकाय अपना कार्य ठीक प्रकार से करने में असमर्थ है।

4.10 संदर्भ

आस्टिन, ग्रेनविल, 1998, वर्किंग इन ए डेमोक्रेटिक कंस्टीट्यूशन द् इंडियन एक्सपीरीऐंस, नई–दिल्ली, ओ.यू.पी.।

बसु, डी. डी. 1977, *इंट्रोडक्शन टू द् कंस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया,* न्यू–दिल्ली, प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया, पी.वी.टी।

भट्टाचार्य, मोहित एन्ड पी.के.दत्ता (1991), *गवर्निंग रूरल इंडिया,* उप्पल पब्लिंसिंग हाउस।

चंद्रशेखर बी. के., *पंचायती राज इन इंडिया* – स्टेटस रिपोर्ट 1999 टास्क फोर्स ऑन पंचायती राज राजीव गाँधी फाउन्डेशन न्यू दिल्ली, मार्च 2000।

कंस्टीट्यूएन्स अमेम्बली डिबंट्स : ओफिसियल रिपोर्ट 1999 न्यू दिल्ली, लोक सभा सचिवालय।

कंस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया ओरिजीनल टैक्स्ट (1999) *डीरूेन्ट्रेल्य इंजेशन एक्ट लोकल पोलिटिक्स* न्यू दिल्ली, इंडिया सेज प्रकाशन।

झा, एन. एस. एन्ड पी0 सी0 माथुर 1999, *डीसेन्ट्रेलाईजेशन एन्ड लोक पोलिटिक्स* न्यू दिल्ली, सेज प्रकाशन।

रिपोर्ट ऑफ कमिटी ऑन पंचायती राज इंस्टीट्यूशंस (चेयरमैन अशोक मेहता) भारत सरकार, ग्रामीण विकास विभाग, कृषि मंत्रालय, न्यू दिल्ली, 1978।

रिपोर्ट ऑफ कमिटी ऑन एडमिनिस्ट्रेटिव अरेंजमेंट्स फोर रूरल डवलमेंमट एण्ड पोपर्टी एलिवियेशन प्रोग्राम (चेयरमैन जी.वी.के. राव) ग्रामीण विकास विभाग, कृषि मंत्रालय, न्यू दिल्ली, 1985।

रिपोर्ट ऑफ द् टीम फोर द् स्टडी ऑफ कम्युनिटी प्रोजेक्ट्स एण्ड नेशनल एक्सटेंशन सर्विस, कमिटी ऑन प्लान प्रोजेक्ट्स, नेशनल डवलपमेंट काउन्सिल, वोल्यूम–1–11, सबमिटेड इन नवंबर 1957 एण्ड वोल्यूम 3, सबमिटेड इन दिसंबर, 1957।

द् कंस्टीट्यूशन (74वां संशोधन) अधिनियम, 1992 भारत सरकार, न्यू दिल्ली।

द् कंस्टीट्यूशन (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 भारत सरकार, न्यू दिल्ली।

4.11 सारांश

संविधान के 73वें एवं 74वें संशोधन अधिनियम के पारित होने के बाद स्थानीय शासन के विकास में क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिले हैं। इन संशोधनों ने ग्रामीण एवं शहरी निकायों को संविधानिक दर्जा दिया है, तथा उनके नियमित चुनाव के लिए आवश्यक प्रावधान किये हैं। इस संशोधन के प्रावधानों में एस.सी., एस.टी., महिलाओं के लिये आरक्षण का भी प्रावधान हैं। इन कानूनों के प्रावधानों ने समाज के विभिन्न कमजोर वर्गों की भागीदारी भी सुनिश्चित की ताकि स्थानीय शासन का सही लक्ष्य प्राप्त किया जा सके। इन संशोधनों ने ग्रामीण एवं शहरी शासन के लिये संस्थाओं को संविधानिक दर्जा प्रदान किया है। लेकिन कार्य, वित्तिय शक्तियाँ, तथा स्वायत्ता राज्य सरकारों पर निर्भर है। स्थानीय निकायों के पास पर्याप्त फंड नहीं होता इसलिये वे ज्यादातर राज्य सरकारों पर ही निर्भर रहती हैं।

राज्य सरकारों पर उनकी निर्भरता ही उनके कार्यों में सबसे बड़ी बाधा है। फिर भी, स्थानीय सरकारें विभिन्न विकास एवं कल्याणकारी योजनाओं को लागू करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इस प्रकार, स्थानीय सरकारों ने निचले स्तर पर लोकतंत्र को मजबूत करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

4.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) योजना आयोग ने बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं के परीक्षण के लियेएक समिति का गठन किया था। समिती ने अपनी रिपोर्ट सौंपी एवं त्रि–स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था की सिफारिश कीः अ) ग्राम पंचायत, ब) पंचायत समिती तथा स) जिला परिषद।

अभ्यास प्रश्न 2

1) ग्राम सभा एक नीति–निर्माण के कार्य के तौर पर कार्य करती है। और इसका गठन ग्राम के सभी पंजीकृत मतदाताओं को मिलाकर किया जाता है। यह वार्षिक बजट पारित करती है तथा गाँव की प्रमुख समस्याओं की चर्चा करती है। इसके अलावा, ग्राम सभा, ग्राम स्तर पर शक्तियों एवं कार्यों को अंजाम देती है। जैसे

कि राज्य विधायिका। यह केन्द्रिय एवं राज्य की गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों में लाभार्थियों के चयन की भी जिम्मेदार है। इसके अलावा ग्राम सभा से फंड के उपयोग का प्रमाण पत्र भी ग्राम पंचायत को प्राप्त करना होगा।

अभ्यास प्रश्न 3

1) 74वाँ संशोधन अधिनियम के अंतर्गत शहरी निकायों को सत्ता का हस्तांतरण किया गया है। नगरपालिकाऐं निचले स्तर की इकाई है। यह अधिनियम शहरी निकायों को संविधनिक दर्जा प्रदान करती है। राज्य सरकारें इन्हें आवश्यक शक्तियाँ प्रदान करती हैं ताकि ये योजनाऐं एवं कार्यक्रमों को लागू कर सकें। अनुच्छेद 243–डब्ल्यू के अंतर्गत इन इकाइयों को शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। 12वीं अनुसूची के अनुसार 18 विषयों पर ये इकाइयाँ कानून बना सकती हैं, इनमें कुछ विषय इस प्रकार है :– शहरी योजना, भवन निर्माण, आर्थिक एवं सामाजिक विकास की योजना, रोड़ एवं पुल निर्माण, जल आपूर्ति, जनस्वास्थ्य, स्वच्छता, कचरा प्रबंधन, इत्यादि कुछ विषय नगरपालिकाओं के अंतर्गत आते हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 राज्य स्वायत्ता*

संरचना

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 भारतीय संघवाद में स्वायत्ता

5.3 भारतीय राज्यों में स्वायत्ता की माँग

5.3.1 डी.एम.के. – राजमन्नार समिति

5.3.2 अकाली दल – अंतदपुर साहिब प्रस्ताव

5.3.3 पश्चिम बंगाल ज्ञापन प्रस्ताव

5.3.4 तेलगू देशम पार्टी – विजयवाड़ा सम्मेलन

5.3.5 नेशनल कांफ्रेंस – श्रीनगर सम्मेलन

5.3.6 नागा राष्ट्रीय परिषद – मिजो राष्ट्रीय मोर्चा

5.4 केन्द्र राज्य वित्तीयययय संबंध – स्वायत्ता

5.5 राजनीतिक स्वायत्ता के लिए मांग

5.6 बहुलतावादी समाज तथा स्वायत्ता का प्रश्न

5.7 नृजातीयता और स्वायत्ता

5.8 भाषा एवं स्वायत्ता

5.9 संदर्भ

5.10 सारांश

5.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

यह इकाई संघीय राजनीतिक व्यवस्था में राज्य स्वायत्ता के मुद्दों एवं अवधारणा से संबंधित है तथा भारतीय राज्य से राज्य स्वायत्ता संबंधी प्रश्न को समझने की कोशिश करती है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- स्वायत्ता की मांग की अवधारणा और आधार को समझ सकेंगे,
- राज्य स्वायत्ता से संबंधित राजनीतिक विशेषताओं की चर्चा कर सकेंगे,
- क्षेत्रीय राजनीतिक दलों से स्वायत्ता की मांग की व्याख्या कर सकेंगे, तथा
- नृजातीयता, भाषा एवं राज्य स्वायत्ता के प्रश्न के बीच संबंधों का विश्लेषण कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

केन्द्र और राज्य के बीच विभिन्न स्तरों पर संबंध है उसे शक्तियों के विभाजन के रूप में जाना जाता है। इस तरह की व्यवस्था राष्ट्र–राज्य के तीनों अंगों कार्यपालिका

* डॉ. मंजरी राज आरॉओं, ऐसिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, बी बी ए यू, लखनऊ

व्यवस्थापिका तथा न्यायपालिका के बीच संबंधों से अलग है। जिसे शक्ति पृथक्कीरण के रूप में जाना जाता है। भारत के संविधान में केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियां के विभाजन को तीन सूचियों में बांटा गया है, केन्द्र सूची, राज्य सूची एवं समवर्ती सूची। आपने इकाई संख्या तीन में इन सूचियों के बारे में पढ़ा है। जैसा कि आपने इकाई संख्या तीन में पढ़ा है राज्य सूची के विषयों में कानून बनाने का अधिकार राज्यों को प्राप्त है। राज्य सूची में उल्लेखित मदों के बीच सत्ता के विभाजन की संवैधानिक योजना केंद्र और राज्य संघीय इकाइयों को कुछ स्वायत्त्ता प्राप्त कराते हैं। राज्य स्वायत्ता का अर्थ किसी राज्य के अधिकार एवं शक्ति से होता है, जिससे वह संविधान द्वारा उल्लेखित कुछ कार्यों पर स्वतंत्र निणर्य ले सके तथा उनका निष्पादित कर सके। इसका तात्पर्य है कि राज्यों के दिन–प्रतिदिन के मामलों में केन्द्र सरकार का हस्तक्षेप न होना। राज्यों द्वारा सभी प्रमुख निर्णय भारत की सातवीं अनुसूची में राज्यों को प्रदत्त शक्तियों के अनुसार लिये जाते हैं।

5.2 भारतीय संघवाद में स्वायत्ता

एक राज्य के भीतर विभिन्न उप–क्षेत्रों का असमान और असंतुलित विकास भारतीय संघवाद में मूलभूत समस्या है। विकास के स्तरों में असमानता अक्सर राज्यों में, विशेष रूप से कम विकसित राज्यों में, चेतना पैदा हुई है। ऐसे राज्यों का मानना है कि केन्द्र के भेदभाव के कारण उनका क्षेत्र पिछड़ा रहता है। कई मामलों में, राजनीतिक नेता, कार्यकर्त्ता और नागरिक समाज संगठन अपने राज्य में सुझाव देते हैं कि यदि उन्हें स्वयं शासन करने की स्वायत्ता दी जाये तो क्षेत्र का विकास हो सकता है। स्वायत्ता की मांग में वृद्धि को संस्थानों और विकास प्रक्रिया पर नियंत्रण हासिल करने के प्रयास के रूप में देखा जाता है। स्वायत्ता प्राप्त करने के लिये इनमें से कुछ राज्य विशेष दर्जे की मांग करते हैं। विशेष श्रेणी के दर्जा का अर्थ कुछ वंचित राज्यों को केन्द्रिय सहायता में प्राथमिकता देना और कर में छूट देना होता है। इसमें उस क्षेत्र के लिये विशेष विकास प्राधिकरण बोर्ड स्थापित करना, स्थानीय लोगों को नौकरियों में आरक्षण अधिक शिक्षय संस्थाओं की स्थापना, स्वास्थ्य का बुनियादी ढाँचा जैसे अस्तपात, मैडिकल कॉलेज, उद्योगों को प्रोत्साहन इत्यादि भी शामिल है। व्यापक अर्थों में, स्वायत्ता की मांग नागरिक अधिकार, लोकतांत्रिक स्वतंत्रता आंदोलन, लोकतांत्रिक उत्थान, और सत्ता के हस्तांतरण से संबंधित हैं।

पंचायती राज संस्था एवं संघीय देश में स्वायत्ता से वंचितों को समायोजित करने के लिए एक अतिरिक्त उपकरण के रूप में होते हैं। पंचायतों के अधिनियम के पारित होने के बाद 1996 में पेसा अधिनियम लागू हुआ, इसके द्वारा अनुसूचित क्षेत्रों में जमीनी स्तर पर लोकतंत्र को सक्षम करके कम किया जा सकता है। राजनीतिक प्रक्रिया जो कि दलीय व्यवस्था तथा गठबंधन राजनीति से चलती है निम्न स्तर पर सत्ता हस्तांरण के महत्व को नजरअंदाज करती दिखती है। फिर भी राज्य स्वायत्ता की चर्चा में मुख्य केंद्र बने हुए है। स्वायत्ता प्राप्त करने वाली मुख्य इकाई के रूप में महत्व के कारण, अनेक स्वायत्ता आंदोलनों में राज्य गठन की मांगों को मुख्य रूप में देखते हैं। इसका मुख्य राज्यों स्वायत्त इकाई के रूप में बढ़ती महत्ता है।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) राज्य स्वायत्ता का क्या अर्थ है?

.....

.....

.....

.....

5.3 भारतीय राज्यों में स्वायत्ता की मांग

1967 में चौथे आम चुनावों के पहले, केंद्र एवं राज्यों के संबंध सामंजस्यपूर्ण थे क्योंकि केन्द्र एवं राज्य दोनों में एक सत्तारूढ़ दल के रूप में कांग्रेस पार्टी का प्रभुत्व था। ये आम चुनाव भारतीय राजनीतिक प्रक्रिया और विशेष रूप से संघीय संबंधों में एक महत्वपूर्ण मोड़ थे। कांग्रेस पार्टी नौ राज्यों में चुनाव हार गई थी और लोक सभा में भी कांग्रेस पार्टी के बहुमत में काफी कमी आ गई थी। इस घटनाक्रम ने स्वायत्ता की मांग को प्रोत्साहित किया तथा विभिन्न राज्यों में क्षेत्रीय दल सत्ता में आ गये थे। क्षेत्रीय दलों को यह महसूस हुआ कि मौजूदा संवैधानिक संघीय व्यवस्था में न तो राज्यों की भावनाओं को सम्मान किया और न ही राज्यों की जरूरतों और समस्याओं की सराहना की। इसलिये राज्यों की अधिकतम स्वायत्ता राज्यों के विकास एवं वृद्धि के लिये मांग की। 1978 से 1990 के दशकों तक क्षेत्रीय दलों की केन्द्र की गठबंधन की राजनीति में भागीदारी केंद्र की स्थिति कुछ हद तक संयमिल हो गई थी। राज्य की स्वायत्ता की तलाश भारतीय संघवाद में एक मुद्दे के रूप में बनी हुई है। नीचे दिये गये उप–अनुभाग में भारत में पार्टियों के क्षेत्रीय नेताओं द्वारा बनाये गये दलों के कुछ उदाहरण दिये गये हैं।

5.3.1 डी.एम.के. राजमन्नार समिति

क्षेत्रीय दलों ने स्वायत्ता के मुद्दे को उठाया और अधिक शक्ति एवं वित्तिय संसाधनों की मांग की। तमिलनाडु में डी.एम.के. पार्टी ने जिसमें तमिल भाषा एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का संयोजन था, स्वायत्ता के लिये एक मजबूत आंदोलन खड़ा किया। 1960 के दशक की शुरुआत में, डी.एम.के. ने तमिलनाडु के अलग स्वतंत्र संप्रभु राज्य के लिये प्रचार किया था। बाद में, उनकी मांग को बढ़ाकर द्रविड़वाद किया गया जिसमें तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश एवं केरल शामिल थे। इसे केन्द्र द्वारा देश की अखंडता के एक गंभीर खतरे के रूप में खतरे के रूप में देखा गया था। बढ़ती अलगाववादी प्रवृत्तियों के साथ 1960 के दशक में, देश में केन्द्र सरकार ने अलगाववादी प्रवृत्तियों को कुचलने के लिए 16वें संविधान संशोधन की पहल की थी। जो विधेयक अधिनियम बन गया उसे अलगाववादी विरोधी विधेयक जाना जाता था। यह विधेयक भारत की संप्रभुता को बनाये रखने के लिये तथा देश की एकता बनाये रखने के लिये अलगाववादी प्रवृत्तियों को रोकने के लिये था। संशोधन के परिणामस्वरूप डी.एम.के. ने भी अपने रूख को नरम किया और संप्रभु द्रविड़नाद की माँग को छोड़ दिया। हालांकि बार–बार इसने राज्य की स्वायत्ता की माँग उठाया।

1969 की साल में, डी.एम.के. के नेतृत्व में तमिलनाडु सरकार ने तीन सदस्यी समिति का गठन किया जिसके अध्यक्ष पी. बी. राजन्नार थे। इस समिति का मुख्य उद्देश्य केंद्र एवं राज्यों के संबंधों का अध्ययन करना तथा राज्यों को अधिक स्वायत्ता प्राप्त करने के लिये संवैधानिक संशोधनों का सुझाव देना था। समिति के अन्य सदस्यों में एल. मुदलियार तथा पी. चंद्रा रेड्डी थे। राजमन्नार समिति ने कुछ सिफारिशें की जैसे कि अनुच्छेद 356 को हटाना, योजना आयोग को हटाना (वर्तमान में नीति आयोग के रूप में संशोधित) तथा वित्त आयोग को स्थायी निकाय बनाना, केन्द्र एवं समवर्ती सूची से कुछ विषयों को राज्य सूची में स्थानांतरित करना एवं तीन सूचियों में विषयों के पुनर्वितरण के लिये उच्च समिति की नियुक्ति करना।

5.3.2 अकाली दल – आनंदपुर साहिब प्रस्ताव

शिरोमणी अकाली दल, जिसे अकाली दल के नाम से जाना जाता है, पंजाब में एक क्षेत्रीय पार्टी है जिसका मजबूत आधार पंजाब में सिख समुदाय है। एक मास्टर तारा सिंह जो एक सिख धार्मिक और राजनीतिक नेता थे, ने शिरोमणी गुरूद्वारा प्रबंधक कमेटी का आयोजन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। अकाली दल ने तारा सिंह के नेतृत्व में 1960 के दशक की शुरुआत में सिखों के लिये एक अलग राज्य की मांग की। संत फतेह सिहं की अध्यक्षता में भारत में पंजाबी बोलने वालो के लिये पंजाब सूबा बनाने की मांग को लेकर कई आंदोलन हुए। उन्होंने पंजाबी सूबे की मांग को लेकर आमरण अनशन शुरू किया था। केन्द्र सरकार ने पंजाब सूबा की मांग मान ली हालांकि इससे सभी सिख संतुष्ट नहीं हुए। शिरोमणी अकाली दल ने 1968 में बाटला सम्मेलन में राज्यों को अधिक स्वायत्ता के लिये एक प्रस्ताव पारित किया। फिर से वर्ष अक्टूबर, 1973 में अकाली दल ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें धार्मिक एवं राजनीतिक दोनों मांगें शामिल थीं, इस प्रस्ताव को आनंदपुर साहिब प्रस्ताव के रूप में जाना जाता है। आनंदपुर साहिब प्रस्ताव में मांग की गई कि केन्द्र की शक्तियां रक्षा, विदेशी मामले, संचार, मुद्रा इत्यादि तक सीमित हो तथा अन्य शक्तियाँ राज्यों के पास हो। अकाली दल नेता गुरनाम सिंह ने एक प्रस्ताव पेश किया तथा जब वे पंजाब के मुख्यमंत्री बने, उन्होंने डी.एम.के. के नेता करूणानिधि को बुलाया। दोनों नेताओं ने स्वायत्ता की मांग को लेकर चर्चा की थी।

5.3.3 पश्चिम बंगाल ज्ञापन प्रस्ताव

पश्चिम बंगाल में वाम मोर्चा सरकार ने 1977 में एक ज्ञापन अपनाया था जिसमें माँग की गई थी केन्द्र राज्य संबंधों की पुनर्व्यवस्था हो और इसे विचार के लिये केन्द्र को प्रस्तुत किया। ज्ञापन में बताया गया कि कैसे केन्द्र ने राज्यों की शक्तियों का अतिक्रमण किया और राज्यों की स्वायत्ता धीरे–धीरे समाप्त हो गई। पश्चिम बंगाल ज्ञापन में कहा गया कि अनुच्छेद 356 संघीय व्यवस्था को कमजोर करने के लिये संघीय विरोधी साधन है और यह राज्यों की स्वायत्ता को भी कमजोर करता है। इसलिये ज्ञापन में माँग की गई की अनुच्छेदों 356 एवं 357 जो राष्ट्रपति को राज्य विधान सभा भंग करने की शक्ति देता है, उसे हटा देना चाहिये। इसलिए संविधान को संशोधित करके भारतीय गणराज्य के विवरण में संघीय शब्द को शामिल किया जाना चाहिये। इसी तरह, संविधान में संघ शब्द को 'संघीय' शब्द से प्रतिस्थापित किया जाना चाहिये।

5.3.4 तेलगू देशम पार्टी – विजयवाड़ा सम्मेलन

आंध्र प्रदेश के इतिहास में कांग्रेस पार्टी का दबदबा तीन दशकों तक रहा, लेकिन 1983 के चुनावों में तेलगू देशम पार्टी (टी.डी.पी.) इसके दबदबे को समाप्त कर दिया था। टी.डी.पी. ने आंध्र प्रदेश में कांग्रेस के आधिपत्य को कम समय में समाप्त करने में सफलता प्राप्त की थी। टी.डी.पी. की स्थापना 29 मार्च, 1982 को एन.टी. रांमा राव ने की थी जो कि एक प्रसिद्ध अभिनेता थे। उन्होंने हिन्दू पौराणिक पात्रों जैसे श्रीराम, कृष्ण, कर्ण आदि की भूमिकाऐं निभाई थी और एक नैतिक व्यक्ति के अभिमय के रूप में समाज के कमजोर वर्गों के हितों का समर्थन किया। टी.डी.पी. ने राज्यों की स्वायत्ता तथा अधिक वित्तीय विकेन्द्रीकरण पर बल दिया और राज्यों को अधिक शक्तियां हस्तांतरित करने पर भी बल दिया था। इसने राज्यपाल के पद को समाप्त करने के मांग भी की थी। टी.डी.पी. नेता एन.टी. रामाराव ने मई 1983 में विपक्षी दलों की विजयवाड़ा में बैठक की मेगबानी की थी। बैठक के बाद विपक्षी नेताओं ने एक संयुक्त बयान जारी किया जिसमें बैंगलोर में रामकृष्ण हेगड़े के नेतृत्व में बुलाई दक्षिणी भारतीय मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में केन्द्र–राज्य संबंधों को समीक्षा की माँग की गई थी।

5.3.5 नेशनल कांफ्रेंस – श्रीनगर सम्मेलन

अक्टूबर 1983 में विभिन्न राजनीतिक दलों के लगभग 50 नेताओं श्रीनगर की बैठक में हिस्सा लिया था। इस बैठक की मेजबानी उस समय के राज्य जम्मू कश्मीर के मुख्यमंत्री उस समय फारूख अब्दुल्ला ने की थी। जम्मू–कश्मीर को बाद में 5 अगस्त, 2019 को दो केन्द्र शासित प्रदेशों जम्मू कश्मीर एवं लद्दाख में तब्दील कर दिया था। श्रीनगर सम्मेलन ने डी.एम.के., टी.डी.पी., अकाली दल, आर.पी.आई., असम जातीय दल, एवं वामपंथी दलों तथा नेशनल कांफ्रेंस जैसे दलों को एक साथ लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। उपस्थित सभी दल संघवाद एवं राज्यों की स्वायत्ता के समर्थन में एक जुट हो गए।

5.3.6 नागा राष्ट्रीय परिषद एवं मिजो राष्ट्रीय मोर्चा

1950 और 1960 के दशक में नागा और मिजो जनजातियों ने अपने क्षेत्र के लिए स्वायत्ता की मांग की थी। नागा राष्ट्रीय परिषद ने नागा पहाड़ियों के लिए असीमित स्वायत्ता की वकालत की थी। ए.जे.डी. फिजो के नेतृत्व में इसने संपूर्ण स्वतंत्रता की, यह कहते हुए मांग की थी कि, नागाओं की अपनी अलग सांस्कृतिक एवं जातीय पहचान है जो देश के बाकी अन्य क्षेत्रों भिन्न से हैं। मिजो राष्ट्रीय मोपे (मिजो नेशनल फ्रंट) ने भी नागा राष्ट्रीय परिषद की तरह अलग मिजोरम स्वतंत्र राज्य की मांग की थी जिसका नेतृत्व लालडेंगा ने किया था। इस उद्देश्य के लिये, मिजो राष्ट्रीय मोपे ने युवाओं की भर्ती की तथा उन्हें सैनिक कार्यवाही में प्रशिक्षित किया।

5.4 केन्द्र राज्य वित्तिय संबंध – स्वायत्ता

लॉरेंस सैज (2002) ने टिप्पणी की है कि 1947 में भारत के विभाजन के कारण संविधान सभा ने भारत के लिए एकात्मक राज्य का समर्थन किया था। इसने भारत में अधिक मध्यम मार्गी राज्य प्रवृत्ति को जन्म दिया स्वतंत्र, हालांकि यह संरचना में संघीय था। संघीय व्यवस्था में केन्द्र सरकार को एक अधिक महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी

गई थी। संघ सूची में क्षेत्राधिकार और वित्तिय यह मामलों से से संबंधित सबसे अधिक विषय शामिल है, और केंद्र के पास अवशिष्ट शक्तियों भी होंगे। इससे केन्द्र की केंद्रामिमुख शक्तियाँ मजबूत होती हैं तथा केंद्रत्यागी शक्तियाँ कमजोर होती हैं तथा संघ सरकार पर राज्यों की निर्भरता अपरिहार्य हो जाती है। रोनाल्ड एस. वाट्स (1996) ने स्पष्ट किया है कि क्षेत्रीय सामाजिक विविधता और विखंडन भारत में एक साथ मौजूद है। इसलिये अलगाव के प्रयासों को रोकने के लिये एक मजबूत संघीय सरकार बनाये रखना उचित है। संघ सूची में राज्यों की तुलना में वित्तिय मामलों से संबंधित शक्तियाँ और विषय अधिक है। जैसा कि राज्य सूची में उल्लेखित है, और समवर्ती सूची में राज्यों के पास केन्द्र की तुलनामें अपर्याप्त वित्तिय संसाधन है। ये इसलिये क्योंकि अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र के पास होती है। इसके फलस्वरूप राज्यों के पास राजस्व की कमी है और वे विशिष्ट सार्वजनिक नीतियों का लागू करने के लिये संसाधनों के लिए काफी हद तक केंद्र पर निर्भर रहते है। केन्द्र में सरकार चलाने वाली पार्टी केंद्र की सार्वजनिक नीतियों का उपयोग करके राज्य स्तर पर लोकप्रियतता हासिल कर सकती है। यह केंद्र के वित्तिय संसाधनों का उपयोग करके, तथा राज्य स्तर पर कार्यकारी कार्यों का निर्धारण करके भी मतदाताओं को प्रभावित कर सकती है।। स्वायत्ता की मांग राज्य एवं केन्द्र के बीच विवाद का मामला बनता जा है। राज्य की स्वायत्ता के मुद्दों को हल करने के लिये कई समितियों और आयोगों का गठन किया गया है। इकाई संख्या तीन में, – केन्द्र राज्यों के संबंध, मुद्दे और केन्द्र राज्यों के संबंधों को सुधारने के प्रयास विषय के बारे में आप पहले ही पढ़ चुके हैं।

5.5 राजनीतिक स्वायत्ता की मांग

क्षेत्रीय राजनीति तथा क्षेत्रीय दलों के उदय जो कि कांग्रेस के वर्चस्व के प्रतिरोध में थी, ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्वायत्ता की मांग को आकृति प्रदान की थी। क्षेत्रों में पारस्परिक सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक अंतरों ने शक्ति संतुलन को प्रभावित किया। मजदूर वर्ग की राजनीति के उदय, सामाजिक रूप से वंचित समूहों के उदय तथा कृषक वर्ग के कारण राज्य एवं क्षेत्रों में स्वायत्ता की मांग को बढ़ावा मिला।

स्वायत्ता की मांगों में एक महत्वपूर्ण प्रश्न पर्यावरण प्रशासन और प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण है। ये आंदोलन जातीय समूहों की मांगों के साथ मेल खा सकते हैं जैसे कि, आदिवासी, पहाड़ी निवास समुदायों, और विभिन्न समुदायों को ग्राम प्रशासन और प्रथागत प्रथाओं में स्वायत्ता प्रदान करने के लिए जाने वाले आंदोलन हैं। इन मांगों को असममित संघवाद के माध्यम से मान लिया गया है। इन्हें नये राज्य और अद्वितीय कृत्यों जैसे कि पंचायत अनुसूचित क्षेत्र विस्तार (पेसा) अधिनियम 1996 के माध्यम से भी लागू कराया गया है। आपने पेसा के बारे में इकाई संख्या 4 में पढ़ा होगा कि उदारवादी अर्थव्यवस्था और पूँजीवाद की वृद्धि के साथ–साथ, भूमि एवं जंगल पर नियंत्रण भी कए मुख्य विषय बन गया। ये विषय इस प्रकार है : प्रथम राज्य प्रायः अपनी स्वायत्ता को पूँजीवाद से खतरा मानते है क्योंकि इन्हें राजनीतिक विशिष्ट वर्गों का समर्थन प्राप्त है। इसने राज्य स्तर पर स्वायत्ता की माँग को बढ़ावा दिया ताकि वे अपने विकास की गतिविधि को आगे बढ़ा सकें। दूसरा, पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की शुरुआत के साथ, पारंपरिक अभिजात वर्ग का प्रभुत्व जैसे कि, जमींदार और स्थानीय शासक समूह, बाजार की ताकतों को क्षेत्रीय माँगों स्वायत्ता की से चुनौती मिली है।

1967–79 के दौरान पंजाब में अकाली दल के उदय, तमिलनाडु में डी.एम.के. का उदय, उत्तर प्रदेश में भारतीय क्रांति दल, यू.पी. में कुलक, हरियाणा एवं पंजाब में कुलक तथा द्रविड़ आंदोलन क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलनों के महत्वपूर्ण घटकों के उदाहरण है।

स्वायत्ता की मांग के लिये जो महत्वपूर्ण कारक जिम्मेदार है पृथक राज्य की मांग के लिये जरूरी है वह है ऐतिहासिक असमानता राज्य एवं क्षेत्रों के विकास में। कुछ पिछड़े राज्यों को कए बीमारू राज्य के रूप में जाना जाता है। ये वे राज्य है जिनकी आर्थिक खराब होती है। इनको बीमारू (BIMARU) इन राज्यों के नाम के पहले अग्रेंजी अक्षर के नाम कहा जाता है। ये राज्य हैं – बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश। ये क्षेत्र देश के औद्योगिक विकास के लिये कच्चे माल के प्रमुख योगदानकर्ता है। ऐसे राज्यों को अक्सर संसाधन अभिशाप के तौर पर उपयोग किया जाता है। संसाधन अभिशाप का अर्थ है एक विरोधाभासी स्थिति जिसमें एक क्षेत्र समृद्ध प्राकृतिक संसाधनों के बावजूद आर्थिक रूप से कमजोर होता है। यह तर्क संघीय व्यवस्था के अंदर कम विकसित राज्यों के लिये उचित व्यवहार की वकालत करने के लिये किया जाता है।

बाजार अर्थव्यवस्था का विस्तार जो कि आधुनिक तकनीक पर आधारित है, पिछड़े क्षेत्रों को वंचित करती हैं। बीमारू राज्यों की कमजोर शासन प्रणाली के कारण कच्चे माल का उत्पादन करने वाले क्षेत्रों का हित निजी हितों के खिलाफ असुरक्षित रहता है। इसलिये शासन का स्थानीय नियंत्रण स्थापित करने के लिये स्वायत्ता की माँग अक्सर होती देखी गई है। उदाहरण के लिये झारखंड क्षेत्र स्वायत्त परिषद का गठन 1995 में तत्कालीन बिहार सरकार द्वारा प्रदान किया गया था। हालांकि बिहार का झारखंड क्षेत्र पर्याप्त रूप से क्षेत्रों के हितों का प्रतिनिधित्व नहीं करने वाली सरकार से असंतुष्ट बना रहा। वर्षों से क्षेत्रों की स्वायत्ता की मांग का निरीक्षण करने के लिए कई आयोगों का गठन किया गया एवं नये राज्यों के गठन के लिए भी इन आयोगों का गठन किया गया।

5.6 बहुलवादी समाज तथा स्वायत्ता का प्रश्न

बड़े राज्यों में सांस्कृतिक और भाषाई विविधता के कारण कई संगठित समूहों का उदय हुआ है। ये समूह अपने–अपने हितों के समायोजन को प्रभावी बनाने के लिए प्रशासन पर दावे और प्रतिदावे करते हैं। इन दावों से निपटने में केन्द्र सरकार के सामने प्रशासनिक चुनौती थी कि किस तरह से समायोजन व्यवस्थाओं के प्रबंध के लिये सबसे प्रभावी तरीके स्थापित करें। इनमें से एक था विभिन्न सांस्कृतिक समूहों की राजनीति को संज्ञात्मक व्यवस्था में समायोजित करना, जिसमें भाषाई नीतियों बनाकर राज्य का पुनर्गठन किया गया। मुख्य रूप से एक विशेष भौगोलिक स्थिति में केन्द्रित समूहों के लिये प्रभावी ढंग से उपयोग किया जाता है। किसी क्षेत्र में प्रांतीय स्वायत्ता देना भी उचित है। तथापि सांस्कृतिक मान्यता की माँगों से निपटने के लिये, स्वायत्ता प्रदान करना पूरी तरह से प्रभावी नहीं है, क्योंकि सांस्कृतिक रूप से क्षेत्र बहुत कम समरूप है। आमतौर पर किसी क्षेत्र में हमेशा छोटे समूह रहते हैं, विशेष रूप से उन देशों और राज्यों के बीच संक्रमण क्षेत्र में जो प्राकृतिक सीमाओं में अलग नहीं। जब किसी पहचान समूह सांस्कृतिक पहचान निर्माण राजनीतिक सीमाओं से मेल नहीं खाता है, तब राजनीतिक अशांति पैदा होती है।

अपनी आबादी की सांस्कृतिक और जातीय आकांक्षाओं को समायोजित करने के लिये राज्य पुर्नसमायोजन का सहारा लेता है और लोगों के क्षेत्रीय सांस्कृतिक निर्माण के आधार पर उस प्रांत पर प्राधिकरण स्थापित करता है। भारत जैसे एक स्वतंत्र और लोकतांत्रिक देश में, केन्द्र सरकार या संसद के लिये संभव नहीं कि, वह वैधता के बाद से संस्थागत और चुनावी कारकों के कारण क्षेत्रीय आकांक्षाओं की अनदेखी कर सके। एक लोकतांत्रिक राज्य में सरकार की वैधता काफी हद तक सरकार की क्षमता पर निर्भर करती है, कि वह लोगों अपेक्षाओं को सही तरीके से पूरा कर सके। लोकतंत्र के विस्तार और लोकतांत्रिक मूल्यों में वृद्धि के कारण, राजनीतिक पहचान ऐतिहासिक तौर पर राजनीति की मुख्यधारा में रही हैं । इन समूहों को स्वायत्ता प्रदान की गई ताकि वे राजनीतिक प्रक्रिया एवं नीति निर्माण में अपनी भागीदारी निभा सके।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) भारत में राज्य स्वायत्ता की राजनीति की प्रमुख विशेषताऐं क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.7 नृजातीयता एवं स्वायत्ता

भारत में आदिवासी समूह बहुत महत्वपूर्ण जातीय समूह है जिनमें कुछ समान विशेषताऐं हैं जैसे कि संस्कृति, रीति–रिवाज, भाषा, धर्म, आर्थिक हित इत्यादि। आदिवासी इलाकों में स्वायत्ता के सवाल की जड़ भारत के स्वतंत्रता पूर्व के इतिहास के साथ जुड़ी है। जो क्षेत्र ब्रिटिश प्रशासन के समय, पिछड़े क्षेत्र थे उनको पिछड़े क्षेत्र (Backward Track) तौर पर पहचान किये गये हैं इन्हें बाद में अधिनियम 1935 के अंतर्गत फिर से अप्रवर्जित तथा आंशिक रूप से अपवर्जित के रूप में वर्गीकृत किया गया था। ये क्षेत्र गवर्नर द्वारा शासित होते थे। ये सब क्षेत्र वे थे जहां पर जनजातीय आबादी अधिक थी, लेकिन विभिन्न स्तर की स्वायत्ता थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारतीय असममित संघीय ढांचे में इन क्षेत्रों की स्वायत्ता चर्चा का विषय बन गई थी। झारखंड राज्य की माँग प्रथम बार 1929 में छोटानागपुर प्लेटो में उठी थीं जहां पर जनजातीय समुदायों की विविध आबादी रहती थी। इसके लिये आंदोल 2000 तक लगातार जारी रहा था जब छतीसगढ़ एवं झारखंड का गठन किया गया था। संविधान की छठी अनुसूची के अंतर्गत उत्तर–पूर्वी राज्यों के अनुसूचित जनजाति के क्षेत्रों की स्वायत्ता से संबंधित प्रावधानों है। फिर भी इन क्षेत्रों में लगातार विवाद रहता है विशेषकर प्रतिस्पर्धा के कारण नृजातीय समूहों के बीच स्वायत्ता की माँग को लेकर।

5.8 भाषा और स्वायत्ता

भाषा के आधार पर राज्यों को संगठित करने की बहस संविधान सभा में उठाई गई थी। हालांकि धार्मिक आधार पर भारत के विभिन्न के कड़वे अनुभव के कारण भाषाई आधार पर राज्य के पुनर्गठन को राष्ट्र की एकता और अखंडता के लिये संभावित खतरे के रूप में देखा गया था। तथापि कुछ स्थान पर भाषाई आधार पर राज्य की सीमाओं के पुनर्गठन की माँग उठाई गई थी। भाषाई राज्यों की मांग कांग्रेस नेता और क्षेत्रीय राजनीतिक नेताओं के बीच लंबी वार्तालाप पर आधारित थी। क्षेत्रीय नेताओं का विश्वास था कि भारत के स्वतंत्र होने के बाद भाषाई राज्यों का निर्माण होगा। परिणामस्वरूप, एक तेलगू राज्य की मांग उठी तथा पौटटी श्री रामालू की अनशन कारण मौत के बाद एक अक्टूबर, 1953 को आंध्र राज्य का निर्माण हुआ। क्षेत्रीय नेताओं की इसी तरह की समझ के आधार पर कई अन्य भाषाई प्रांतीय राज्यों की मांग उठी। और 1953 में भाषा के आधार राज्य पुनर्गठन की मांग के परीक्षण के राज्य पुनर्गठन आयोग का गठन के लिए किया गया था। आयोग की सिफारिशों के आधार पर (1955) दक्षिण भारत में भाषाई आधार पर राज्यों को संगठित करने के लिये राज्य पुनर्गठन अधिनिमय 1956 को संसद द्वारा पारित किया गया था।

आजादी के बाद के वर्षों में भारत के राज्यों की स्वायत्ता असमान थी। संविधान 1950 में भाग ए और भाग बी की राज्यों को उच्चतम स्तर की स्वायत्ता प्रदान की जबकि भाग सी एवं डी राज्यों को काफी कम स्वायत्ता थी या बिल्कुल भी स्वायत्ता नहीं थी। अधिनियम 1956 के आधार दक्षिणी राज्यों का भाषा के आधार पर पुनर्गठन हुआ, पुनर्गठन ने ए,बी,सी एवं डी राज्यों केवल राज्य और केन्द्र शासित प्रदेशों में बदला गया।

प्रांतीय राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों के निर्माण के साथ स्वायत्ता की अलग प्रणाली अस्तित्व में आई जिसमें राज्यों को केन्द्र शासित प्रदेशों की तुलना में अधिक स्वायत्ता प्रदान की गई थी। उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में केन्द्र शासित प्रदेश बनाना स्वायत्ता की मांग को हल करने के लिए एक प्रभावी उपकरण बन गया था। 1960 के दशक में पंजाब, महाराष्ट्र और गुजरात राज्य बनाये गये थे, जबकि हिमाचल का एक राज्य में उन्नयन किया गया था। इन राज्यों का निर्माण स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है कि भाषाई और धार्मिक भावनाओं से प्रेरित स्वायत्ता की मांग का पालन करना एक समायोजन वाली राजनीति का प्रतीक होती है। गोरखालैंड की स्वायत्ता की माँग, स्वायत्ता की एक अधूरी मांग का उदाहरण है। कुछ स्वायत्ता आंदोलनों के कारण 2000 में तीन नये राज्यों का गठन हुआ था। झारखंड, छत्तीसगढ़ तथा उत्तराखंड। उत्तराखंड का निर्माण पहाड़ी क्षेत्र में लंबे समय से चली आ रही मांग की परिणति के रूप में देखा जा सकता है।

यदि किसी विशेष भाषाई समूह से राजनीतिक व्यवस्था से अभिभूतो, भाषा प्रभुत्व का एक उपकरण बन सकती है। उनकी भाषा का संस्कृति एक अभिन्न अंग होने के कारण, दूसरी भाषा बोलने वाले लोगों में कथित नुकसान हो सकता है। इसके कारण भाषाई क्षेत्रों में स्वायत्ता एवं पहचान की मांग को बढ़ावा मिला है। इसका उदाहरण उत्तर–पूर्वी राज्यों में भिन्नता है, और विभिन्न सामाजिक, भू–राजनीतिक, और ऐतिहासिक कारक प्रभावित करते है।। उत्तर–पूर्व की पहाड़ियों में स्वायत्ता आंदोलनों के कारण क्रमशः सात क्षेत्र में राज्य बन गए। 1963 में नागालैण्ड एक अलग राज्य

बना, तथा 1972 में मेघालय राज्य बना। मणीपुर और त्रिपुरा भी अलग राज्य बने, जबकि अरूणाचल प्रदेश तथा मिजोरम पहले केन्द्र शासित प्रदेश बनाये गये बाद में 1987 में राज्यों में परिवर्तित किये गये थे। इन राज्यों में विविध अनुसूचित जनजाति की आबादी है और स्वायत्त जिला परिषद हैं जो विशेष रीति–रिवाज से संबंधित स्वायत्ता के साथ निहित है।

अभ्यास प्रश्न 3

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) राज्य की स्वायत्ता में भाषा की क्या भूमिका है?

.....

.....

.....

.....

.....

5.9 संदर्भ

ऑस्टिन, ग्रेनविल (1966), *द इंडियन कंस्टीट्यूशन : कोर्नरस्टोन ऑफ ए नेशन,* न्यू दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

बरूआ सजीब (2020), *इन द नेम ऑफ द नेशनः इंडिया एन्ड इट्स नोर्थ ईस्ट,* कैलीफोर्निया, स्टैंडफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस।

ब्रास, पौल (1991), *एथनिसिटी एन्ड नेशनैलिज्म : थ्योरी एन्ड कम्पेरीजन,* लंदन, सेज प्रकाशन।

ब्रास, पौल (2005), *लैंग्वेज, रीलिजन एण्ड पोलिटिक्स इन नोर्थ इंडिया,* लंदन, यूनिवर्स।

बगीज माईकल (2006), *कंपरेटिव फेडरेलिज्म : थ्योरी एन्ड प्रैक्टीस* राउटलेज, लंदन।

फ्रेंकल, आर. फ्रेन्सिन एण्ड हसन, जोया (2000), *ट्राँसफोर्मिंग इंडिया : सोशल एण्ड पोलिटिकल डायनैमिक्स ऑफ डेमोक्रेसी,* न्यू दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

मजूमदार, अजीत (1989), *द स्टेट एन्ड डवलपमेंट प्लानिंग इन इंडिया,* ई.पी.डब्ल्यू (24) 33, 1877–1884।

सेज, लारेंस (2002), *फेडरेलिज्म विदाउट ए सेंटर : द इम्पेक्ट ऑफ पोलिटिकल एण्ड इकोनोमिक रिफोर्म ऑन इंडियाज फेडरल सिस्टम,* न्यू दिल्ली, सेज प्रकाशन।

स्टूलीग्रोस, डेविट (1999), *ऑटोनोमस काउन्सिल इन नोर्थईस्ट इंडिया : थ्योरी एन प्रैक्टिसस, आल्टर्नेटिव : ग्लोबल, लोकल, पोलिटिकल,* सेज प्रकाशन, वोल्यूम 24, न. 4, अक्टूबर–दिसंबर 1999, पेज 497–535।1

मीनर, मायरन (1965), *पोलिटिकल इंटिग्रेसन एण्ड पोलिटिकल डवलममेंट, एनल्स ऑफ द अमेरिकन अकेडेमी ऑफ पोलिटिकल एन्ड सोशल साइन्स,* 358 (1), मार्च, 1965।

5.10 सारांश

भारत में राज्य की स्वायत्ता पर चर्चा स्वतंत्रता पूव काल में शुरू हुई। अंग्रेजों ने क्षेत्र को राजनीतिक इकाइया आधिपत्य के लिए एक माना। बंटबारे ने संविधान निर्माताओं में अपकेन्द्रिय शक्तियों पर शक पैदा कर दिया था। ब्रिटिश शासन की नीतियों ने स्थानीय समुदायों में अति–केन्द्रिकरण का संदेह बना दिया था। यह संदेह राज्य की राजनीति में स्वायत्ता से संबंधित मुद्दों में द्वंद्व का कारण बना है। आगे आजादी के बाद दो दशकों तक कांग्रेस के आधिपत्य ने कई क्षेत्रीय आकांक्षाओं को दबा दिया जिसके कारण राज्य–केन्द्र के संबंध तनावपूर्ण हो गये थे। क्षेत्रीय आकांक्षाओं की अनदेखी कर एकीकरण के प्रयास और पहचान के मुद्दों ने स्वायत्ता को जन्म दिया। स्वायत्ता की मांगों से निपटने के लिये, केन्द्र ने कई तरीकों का अपनाया जैसे कि राज्य पुनर्गठन के माध्यम से स्वायत्ता प्रदान करता, नये राज्यों का निर्माण, भाषाई प्रांतीय राज्य का सृजन, स्वायत्त स्थानीय निकायों का निर्माण, तथा संघ शासित प्रदेशों का गठन।

फिर भी, भारत के विभिन्न हिस्सों में राज्य की स्वायत्ता की मांग जारी है। आर्थिक रूप से कमजोर राज्यों के विकास, केन्द्र द्वारा नियोजित विकास, पूँजीवादी और बाजार अर्थव्यवस्था का विकास, भाषाई भावनाऐं, क्षेत्रों में विकास की असमानता, नृजातीयता एवं केन्द्र का प्रभुत्व इत्यादि, इसके प्रमुख कारण है। नवागामी प्रथायें जैसे कि पंचायती राज संस्थाऐं अनुसूचित क्षेत्रों में स्वशासन बहुत प्रभावी नहीं रहा क्योंकि, राष्ट्रीय राजनीति में राज्य की भूमिका सक्रिय रही है, जबकि स्थानीय स्व–शासन के माध्यम से स्वायत्ता सैद्धांतिक बनी हुई है। नये राजनीतिक अभिजात वर्ग एवं क्षेत्रीय दलों के उदय के साथ स्वायत्ता की राजनीति राज्य की राजनीति में प्रमुख घटना बन गई है। कई क्षेत्रीय दल लगातार राज्यों को अधिक स्वायत्ता के लिये केन्द्र–राज्य संबंधों पर फिर से विचार करने की मांग कर रहे हैं।

5.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) स्वायत्ता का अर्थ है कुछ कार्यों को स्वतंत्र रूप से किसी उच्च सत्ता के नियंत्रण के बिना को तय करने और निष्पादित करने का अधिकार और शक्ति। इसका मतलब राज्यों के दिन–प्रतिदिन के कार्यों में केन्द्र का गैर–हस्तक्षेप होना है। इसका तात्पर्य वित्तिय संसाधनों पर नियंत्रण रखने से भी है। व्यापक अर्थों में, स्वायत्ता का संबंध अधिकारों, लोकतांत्रिक स्वतंत्रताओं और राज्यों को सत्ता के हस्तांतरण से है।

अभ्यास प्रश्न 2

1) स्वायत्ता की माँगों की प्रमुख विशेषताओं में से एक केन्द्र राज्यों के वित्तिय संबंध है। यह राजस्व संसाधनों पर सख्त नियंत्रण के लिये है। असंतुलित वित्तिय

संसाधनों के विभाजन के कारण केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों की कमी से राज्य संसाधनों के वंचित रह जाते है तथा वे केन्द्र पर निर्भर रहते हैं। वित्तिय संसाधनों के अलावा, राज्य के स्वायत्ता आंदोलनों के राजनीतिक आयाम भी हैं। क्षेत्रीय दलों के उभरने का मतलब है केन्द्र के आधिपत्य को समाप्त करना। केन्द्र के आधिपत्य एवं राजनीतिक सत्ता के विकेन्द्रिकरण की प्रक्रिया राज्य की स्वायत्ता की माँग की ओर ले जाता है।

अभ्यास प्रश्न 3

1) भारतीय समाज विभिन्न सांस्कृतिक, जातीय और अत्यधिक विविध और बहुलावादी है। यहाँ पर विशिष्ट संस्कृतियों और बोलियों के साथ भाषाई समुदाय भी है। इस विविधता के कारण विभिन्न समझ अपनी पहचान को दर्शाता है। जब विशेष भाषाई समूह का राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव होता है, भाषा प्रभुत्व का एक उपकरण बन जाती है। यह भाषाई क्षेत्र की ओर स्वायत्ता की मांग को बढ़ावा देती है। उदाहरण के लिये, तेलगू भाषा बोलने वालों का तमिल प्रभुत्व के खिलाफ, अपने लिए एक अलग तेलगू राज्य की मांग करने, के परिणामस्वरूप, एक अलग प्रांतीय राज्य का गठन किया गया था। अन्य भाषाई राज्यों की मांग भी उसी आधार पर निर्धारित थी। 1953 में राज्य पुनर्गठन आयोग का गठन भी इन्हीं मामलों को देखने के लिये किया गया था।

इकाई 6 उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता एवं शासन*

संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता : मुद्दे एवं चुनौतियाँ

6.3 उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता और नये राज्य के लिए आंदोलन

6.3.1 झारखण्ड, छत्तीसगढ़ तथा छत्तीसगढ़ राज्यों का गठन (2000)

6.3.2 तेलंगाना राज्य का गठन

6.3.3 असम

6.4 शासन का प्रश्न

6.5 संदर्भ

6.6 सारांश

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य समकालीन भारतीय लोकतंत्र में उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता के तौर–तरीकों को जानना है। इसमें क्षेत्रीय स्वायत्ता की समस्याऐं के विषय में भारतीय संघीय व्यवस्था की प्रतिक्रिया का भी विश्लेषण किया जायेगा। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :–

- उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलनों के कारकों की चर्चा कर सकेंगे;
- उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलन एवं संघीय सरकार के बीच आंतरिक संबंधों की व्याख्या कर सकेंगे; तथा,
- उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलनों में सामूहिक भागीदारी के विभिन्न तरीकों को समझा सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता की धारणा ने समकालीन राजनीतिक विज्ञान में बहुत महत्व प्राप्त किया है। उप–क्षेत्रीय आंदोलन स्वायत्ता प्राप्त करने के बारे में है जो कि संविधान के दायरे के अंतर्गत हो। बड़े उप–क्षेत्र एक बड़े क्षेत्र के भाग होते हैं। उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलन जातीय, पहचान, धर्म, क्षेत्र, सामाजिक कारकों तथा ऐतिहासिक अनुभव पर आधारित होते है। इन कारकों की संख्या निश्चित नहीं होती है। वे विभिन्न मामलों में भिन्न–भिन्न हो सकते हैं। स्वायत्ता की माँग के आंदोलन भी भिनन हो सकते हैं। कुछ उदाहरणों में, क्षेत्रीय स्वायत्ता की माँग अलग राज्य की माँग भी बदल जा सकती है। ये माँग एक राज्य या एक से अधिक राज्यों को मिलाकर एक राज्य

* डॉ. चाकाली ब्रहमैया, एसिटटेंट प्रोफ्रेसर, राजनीति विज्ञान तथा मानव अधिकार विभाग, इंदिरा गांधी नेशनल ट्राइबल यूनिवर्सिटी, अमरकांटक, मध्यप्रदेश – 484887

का दर्जा प्राप्त करना भी हो सकता है। 1950 के दशक के बाद से विभिन्न क्षेत्रों में उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता की माँग की जाने लगी है। कुछ मामलों में माँगों के परिणामस्वरूप नये राज्यों का गठन हुआ है, जबकि अन्य मामलों में क्षेत्रीय या लौकिक परिषदों का सृजन भी हुआ है। तथा कुछ मामलों में वे अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्षम नहीं है। सन् 2000 में छत्तीसगढ़, झारखंड तथा उत्तराखंड राज्य बनाये गये जो मध्यप्रदेश, बिहार तथा उत्तर प्रदेश से अलग करके बनाये गये थे। 2014 में आंध्रप्रदेश से अलग करके तेलंगाना, राज्य का गठन किया गया था। जब लद्दाख जम्मू कश्मीर का हिस्सा था वहाँ पर इसे केंद्र शासित राज्य बनाने की मांग उठी थी। 5 अगस्त 2019 को भारत सरकार ने जम्मू और कश्मीर तथा लद्दाख दो केन्द्र शासित प्रदेश बनाये जो कि पहले जम्मू–कश्मीर राज्य के हिस्से थे। जम्मू एवं कश्मीर को एक राज्य के तौर पर अपनी स्थिति को समाप्त कर दिया गया था। महाराष्ट्र में विदर्भ, असम में बोडो तथा पश्चिम बंगाल के पहाड़ी क्षेत्र, कर्नाटक में कूर्ग जिले में राज्यों में उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता की माँग उठ रही हैं। इस इकाई के खंड 6.4 में आप भारत में स्वायत्ता आंदोलनों के कुछ उदाहरणों के बारे में पढ़ेंगे।

6.2 उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता : मुद्दे एवं चुनौतियाँ

भारत में उप–क्षेत्रीय आंदोलनों पर कई किताबें और अकादमिक लेख हैं। इस साहित्य के आधार पर हम उप–क्षेत्रीय आंदोलनों से संबंधित मुद्दों और चुनौतियों की पहचान कर सकते हैं। हालांकि इस तरह के अधिकांश आंदोलन अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े इलाकों में उभरे है, उनमें से कुछ विकसित क्षेत्रों में भी उभरे हैं। इन क्षेत्रों के लोग इस तरह के आंदोलनों में आर्थिक, राजनीतिक सामाजिक और सांस्कृतिक समस्याओं सामना करते हैं और वे समझते हैं कि यदि उन्हें स्वायत्ता मिल जाये तो उनकी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। उनके अनुसार मौजूदा प्रशासनिक इकाई के साथ एक नया राज्य प्राप्त करके संबंधों की व्यवस्था की जा सकती है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि कई मामलों में उनकी परेशानियाँ वास्तविकता पर आधारित नहीं है। ऐसे मामलों में वे धारणाओं पर आधारित होती हैं। लेकिन ऐसे मुद्दों का राजनीतिकरण उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता के लिये लोकप्रिय लाभबंदी का एक प्रभावशाली तरीका बन सकता है। उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलन के संबंध में इस तरह के बदलाव के कारणों पर साहित्य में चर्चा की गई है :

1) **आर्थिक कारण** – जिन क्षेत्रों में उप–क्षेत्रीय आंदोलन (स्वायत्ता) हुए वहाँ के लोगों की शिकायतें रहीं कि उनके क्षेत्र का आर्थिक शोषण किया गया, क्योंकि राज्य की नीतियां उनके क्षेत्र के विरुद्ध बनाई जाने लगी, और उनके प्राकृतिक संसाधनों का शोषण दूसरे क्षेत्र के लोगों द्वारा किया गया, कुछ मामलों में उनका आरोप था कि उनका क्षेत्र एक प्रकार से ''आंतरिक उपनिवेश'' बन गया था, उनका यह भी आरोप था उन्हें रोजगार प्राप्त करने में भी भेदभाव किया जाता था, क्योंकि ज्यादातर रोजगार उन लोगों को दिया गया जो कि उनके क्षेत्र से नहीं थे। यह भी दलील दी गई कि आर्थिक अवसरों की कमी के कारण, उनके क्षेत्र के लोग, दूसरे क्षेत्रों की और पलायन करते हैं। इस कारण उन्हें कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसमें उनके साथ बदसलूकी भी शामिल है। न केवल पिछड़े क्षेत्र ही शिकायत करते हैं बल्कि विकसित क्षेत्र भी ऐसी ही शिकायतें रखते हैं। विकसित क्षेत्रों की शिकायत होती है कि उनके संसाधनों का दुरुपयोग हो रहा है तथा उनको इसका मुआवजा भी नहीं मिलता।

2) **राजनीकि कारण** – उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलन के समर्थकों का मानना है कि उनके क्षेत्र के लोगों का महत्वपूर्ण राजनीतिक संस्थाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है जैसे कि मंत्री, मुख्यमंत्री, इत्यादि। इससे उनके क्षेत्र को नुकसान होता है और महत्वपूर्ण नीति–निर्माण में उनके हितों का प्रतिनिधित्व करने का अवसर भी नहीं मिलता है।

3) **सामाजिक और सांस्कृतिक कारण** – उप–क्षेत्रीय लोगों का मानना तथा उनका आरोप है कि उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहचान को मान्यता नहीं दी गई है, चाहे वह कला का क्षेत्र हो, चाहे सिनेमा, नाटक इत्यादि का मंच हो। उनकी कला एवं संस्कृति को संचार माध्यमों में समानपूर्वक रूप में नहीं दिखाया जाता है।

4) **प्रशासनिक चुनौतियाँ** –यह भी दलील दी गई कि, सभी उप–क्षेत्रों में, विशेषकर बड़े राज्यों में, उनकी तरफ प्रशासन बिल्कुल भी ध्यान नहीं देता। खासकर मुख्यमंत्री, नेता या प्रशासनिक अधिकारी उनके क्षेत्रों की समस्याओं का ठीक प्रकार से संयोजन नहीं करते है। उनके राज्यों का आकार बड़ा होने के कारण वहाँ पर प्रशासन ठीक प्रकार से नहीं चलाया जाता है। इसके परिणामस्वरूप, जो क्षेत्र राज्य की राजधानी से दूर हैं उन्हें नुकसान उठाना पड़ता है।

इन प्रमुख चुनौतियों के कारण ही क्षेत्रीय स्वायत्ता के लिए लोग लाभबंद हो रहे हैं। लेकिन उनकी लामबंदी के प्रभाव के कुछ महत्वपूर्ण बिंदु भी हैं। ये इस प्रकार हैः– इन मुद्दों का प्रभाव एक जैसा नहीं होता है, इन मुद्दों के प्रति लोग तभी लामबंद होते हैं जब उनके क्षेत्र में समस्याओं के प्रति उनमें अपने क्षेत्र की समस्याओं के विषय में जागरूकता है। हो, और वहाँ पर ऐसी एजेन्सियों हो जैसे कि नेता, छात्र, बुद्धिजीवी या नागरिक समाज संगठन जो लोगों को लामबंद कर सके। इसके अलावा सामान्यता, उप–क्षेत्रीय आंदोलन सामाजिक एवं राजनीतिक संदर्भ में घटित होते हैं।

अभ्यास प्रश्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) भारत में उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलनों के कौन–कौन से कारण जिम्मेदार हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) संघवाद एवं उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता आंदोलन के बीच संबंधों की व्याख्या कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

6.3 उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता एवं नये राज्यों के लिए आंदोलन

जैसाकि आपने इस इकाई के उप–भाग 6.3 में पढ़ा है, उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता के मुद्दों को प्रभावित वाले विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और प्रशासनिक कारण होते है। 1950 के दशक के बाद से क्षेत्रीय स्वायत्ता का प्रश्न भारतीय संघवाद में एक महत्वपूर्ण मुद्दा रहा है। इससे अलग–अलग राज्यों में नये राज्यों या देश के कुछ हिस्सों में क्षेत्री स्वायत्त परिषदों का निर्माण हुआ। 1950–1960 के दशक में भाषा के आधार पर राज्यों का निर्माण किया गया। 1960–1980 के दशक में असम से अलग राज्यों का गठन किया गया। सन् 2000 में तीन नये राज्यों – छत्तीसगढ़, उत्तराखंड एवं झारखंड का गठन हुआ। ये राज्य हिन्दी भाषी क्षेत्रों में बनाये गये थे (टिलिन–2013)। जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है, 2014 में आंध्र प्रदेश से अलग करके नया राज्य तेलंगाना का गठन किया गया था। क्षेत्रीयी आकांक्षाओं की पूर्ति की माँग देश के विभिन्न क्षेत्रों में उठने लगी। इस इकाई का यह भाग क्षेत्रीय–स्वायत्ता के भारत में कुछ उदारहणों से संबंधित है। इन उदाहरणों में आप आंदोलनों की विस्तृत विशेषताओं के बारे में पढ़ेंगे। उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता के प्रश्न से संबंधित के लिये पर्याप्त साहित्य है, जिसमें भारत में नये राज्यों के गठन एवं क्षेत्रीय स्वायत्ता शामिल है। क्षेत्रीय स्वायत्ता के प्रश्न से संबंधित प्रतिनिधी नमूना साहित्य दो पुस्तकों में कई अध्यायों में उपलब्ध है। ये पुस्तकें हैं – ''रीथिंकिंग स्टेट पोलिटिक्स इन इंडिया'', आशुतोष कुमार (2011) तथा इंटेरोगेटिंग रीओरमेकइजेरन ऑफ स्टेटस : कल्चर, आइडेंसिटी एण्ड कल्चर'', (2011)। जहाँ एक ओर भारत के अधिकांश राज्यों में उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता की माँग उठने लगी, दूसरी ओर इसने नये राज्यों के गठन का मार्ग भी प्रशस्त किया।

6.3.1 झारखंड, छत्तीसगढ़ एवं उत्तराखंड राज्यों का गठन (2000)

2000 में तीन राज्यों का गठन झारखंड, छत्तीसगढ़ एवं उत्तराखंड इस सदी के राज्यों के पुनर्गठन के बारे में पहला उदाहरण है। झारखंड, उत्तराखंड एवं छत्तीसगढ़ क्रमशः बिहार, उत्तर प्रदेश एवं मध्यप्रदेश राज्यों से अलग किये गये थे। इन राज्यों के गठन को क्षेत्रों की माँगों को पूरा करने की दिशा में एक कदम के रूप में माना जाता है। इन राज्यों की कुछ सामान्य विशेषताएं हैं तथा वे प्रत्येक से अन्य मामलों में भिन्न भी थे। ये राज्य मुख्य तौर पर हिन्दी भाषी राज्य हैं। इनकी सामान्य विशेषताऐं हैं : ये राज्य मुख्य रूप से हिन्दी भाषी क्षेत्रों के प्रमुख उदारहण हैं जिसे हम 'हिन्दी हदयभूमि' के रूप में जाना जाता है। ये राज्य खनिज पदार्थों से भी समृद्ध है, इनमें से दो राज्य झारखंड एवं छत्तीसगढ़ में आदिवासी आबादी है। झारखंड राज्य का निर्माण एक लंबे आंदोलन के पश्चात् हुआ था जो 1990 के दशक में अधिक मुखर हो गया था। झारखंड और उत्तराखंड की भांति, झारखंड में लोकप्रिय लामबंदी की कमी थी।

टिलिन (2013) का मानना है कि छत्तीसगढ़, उत्तराखंड और झारखंड राज्यों का गठन एक संदर्भ में हुआ है। इस संदर्भ में काँग्रेस के पतन और भाजपा के उदय के साथ हुआ। 2000 में मध्य प्रदेश, बिहार तथा उत्तर प्रदेश राज्यों में राज्यों में छोटे दलों से प्रतिस्पर्धा शामिल थे। छत्तीसगढ़ की माँग की जड़े सन् 1948 से जुड़ी हुई चलती है। राज्य पुनर्गठन आयोग ने 1954 में अलग छत्तीसगढ़ राज्य बनाने के विचार को खारिज कर दिया था। छत्तीसगढ़ की पहचान हाशिये पर पड़े सामाजिक लोगों की पर्याप्त आबादी जैसे एस.सी., एस.टी. तथा ओ.बी.सी. समुदायों के आधार पर बनाई गई थी, तथा इसमें आर्थिक शोषण की धारणा शामिल थी। लुईस टिलिन के अनुरूप, छत्तीसगढ़ की माँग 1990 में दो राष्ट्रीय दलों के बीच प्रतिस्पर्धा के कारण लोकप्रिय हो गई, बजाय लोकप्रिय लामबंदी के। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा जो विभिन्न विचारधाराओं का पालन करने वाले कार्यकर्त्ताओं द्वारा गठित एक संगठन था ने छत्तीसगढ़ राज्य के निर्माण की आवश्यकता को रेखांकित किया था। इसने क्षेत्र के शोषण को समाप्त करने के लिये भारतीय संविधान के ढांचे के भीतर स्वायत्ता प्राप्त करने तथा विकास हासिल करने के लिये छत्तीसगढ़ राज्य के निर्माण की मांग को उठाया। झारखंड की पहचान, आदिवासी पहचान की अभिव्यक्ति से उभरी। इस क्षेत्र में औद्योगिक विकास हुआ। 1920 के दशक में झारखंड राज्य के गठन को साईमन कमीशन के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। इसका नेतृत्व घोटानागपुर क्षेत्र के आदिवासी लोगों ने किया जो कि बाद में वर्तमान झारखंड राज्य का हिस्सा बन गया था। शिक्षा को बढ़ावा देने तथा विकास को बढ़ावा देने के लिये 1910 से कुछ संगठन अस्तित्व में आये थे। इनमें से 1937 में जयपाल सिंह के नेतृत्व में 'आदिवासी महासभा' की स्थापना हुई। आजादी के बाद आदिवासी महासभा का नाम बदलकर झारखंड पार्टी कर दिया गया। इस पार्टी ने क्षेत्र में आदिवासी पहचान के बारे में जागरूकता पैदा करने में निर्णायक भूमिका निभाई थी। लेकिन 1963 में कांग्रेस के साथ झारखंड पार्टी के विकास ने आदिवासी नेतृत्व को कमजोर पद दिया गया था। इसके बाद 1972 में झारखंड मुक्ति मोर्चा का उदय हुआ। झारखंड मुक्ति मोर्चा ने दक्षिण बिहार में आदिवासियों के कई मुद्दों को उठाने में शामिल था, जिनमें अलग झारखंड बनाने की माँग भी प्रमुख थी। 1980 में, अलग झारखंड की मांग उठने लगी। टिलिन (2013) ने तीन प्रक्रियाओं जिन्होंने इन माँगों को उठाने में मदद की थी, की पहचान की थी – 1) आपातकाल के बाद गैर–काँग्रेसी सरकार का गठन, 2) झारखंड आंदोलन के अंदर प्रतिस्पर्धा जिसमें नये राज्य की आवश्यकता की मांग भी थी तथा 3) बी.जे.पी. अपने समर्थन के आधार को बढ़ावा देने का प्रयास।

उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों की मांगों में से उत्तराखंड का गठन एक माँग थी। उत्तराखंड की माँग के अलावा उत्तर प्रदेश में और भी नई मांगें भी थी, जिनमें उत्तर प्रदेश के अन्य क्षेत्रों में नये राज्यों का गठन शामिल था। पूर्वी उत्तर प्रदेश के पिछड़े क्षेत्रों एवं बुंदेलखंड (उत्तर प्रदेश के कुछ जिलों और मध्यप्रदेश के जिलों को मिलाकर) क्षेत्रों में पूर्वांचल और बुंदेलखंड राज्यों के निर्माण की मांग की गई थी। पश्चिम उत्तर प्रदेश जो उत्तर प्रदेश का अपेक्षाकृत अधिक विकसित क्षेत्र हैं पर हरित क्रांति के बाद से हरित प्रदेश बनाने की माँग की गई थी (सिंह, 2001)। इन सभी क्षेत्रों में अलग राज्य के समर्थकों ने उनके क्षेत्रों के साथ भेदभाव की शिकायत की जिनमें अन्य क्षेत्रों से इस भेदभाव करने वालों में अन्य क्षेत्रों से संबंधित नेता केंद्र या राज्य सरकार भी शामिल की गई थी। उत्तराखंड की मांग के अलावा, उत्तर प्रदेश के अन्य क्षेत्रों में, लोकप्रिय लामबंदी नहीं देखी गई थी। राजनीतिक नेताओं और

राजनीतिक दलों द्वारा मांग उठाई गई थी। 1990 के दशक में, उत्तराखंड के लिये लोकप्रिय लामबंदी अधिक निरंतर एवं मुखर हो गई थी। उत्तराखण्ड की माँग 1950 के दशक में भी उठाई थी। 1997 में, मुलायम सिंह यादव के नेतृत्व वाली सरकार ने उत्तर प्रदेश में मंडल आयोग की रिपोर्ट को राज्य में लागू करने का निर्णय लिया, जिसमें सरकारी नौकरियों एवं शैक्षिक संस्थानों में दाखिले 27 प्रतिश्त आरक्षण का प्रावधान था। इसका उत्तर प्रदेश के पहाड़ी इलाकों में विरोध किया गया। इस विरोध का आधार यह था कि इस क्षेत्र में ओ.बी.सी. की आबादी नगण्य है क्षेत्र के लोगों ने आरक्षण के विरोध एक आंदोलन शुरू किया। जिसमें खटीमा नामक स्थान पर पुलिस फायरिंग हुई थी। इसमें कई लोग मारे गये थे। इसके बाद से आंदोलन और तेज हो गया तथा उत्तर प्रदेश से अलग उत्तराखंड की मांग जोर पकड़ने लगी।

6.3.2 तेलंगाना राज्य का गठन

तेलंगाना राज्य का गठन पारटी श्रीरामुलू द्वारा की गई भूख–हड़ताल के बाद किया गया था, जब 1953 में उनकी भूख हड़ताल के बाद मौत हो गई थी। वे मद्रास राज्य के जिले से अलग उन क्षेत्रों के एक राज्य की माँग के लिये भूख हड़ताल पर बैठे थे जिसमें ज्यादातर तेलगू भाषी लोग रहते थे। उसी समय आंध्र राज्य का भी गठन हुआ था। इसके बाद केन्द्र सरकार ने एक आयोग का गठन किया जो कि भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन को देखना था। इस आयोग का नाम राज्य पुनर्गठन आयोग (एस आर सी) था। आंध्र प्रदेश राज्य में तीन क्षेत्र थे – रायलसीमा, आंध्रा एवं तेलंगाना, जिसकी स्थापना एक नवंबर 1956 को हुई थी।

आंध्र प्रदेश राज्य के गठन का तेलंगाना के लोगों द्वार विरोध किया गया था। उनका मानना था कि तेलगू भाषा राज्य बनने के ठीक कारण नहीं हो सकती, क्योंकि तेलंगाना आंध्रा क्षेत्र से ऐतिहासिक तौर पर काफी अलग क्षेत्र है। यह एक पिछड़ा क्षेत्र था। उनका मानना था कि तलेंगाना का हित आंध्र प्रदेश राज्य में सुरक्षित नहीं हो सकता है। तेलंगाना क्षेत्र के विरोध के कारण, आंध्रा एवं तेलंगाना क्षेत्र के बीच 1956 में दोनों क्षेत्रों के कांग्रेस नेताओं के बीच एक समझौते पर हस्ताक्षर हुए। इस समझौते को ''जेंटलमैन समझौते'' के तौर पर जाना गया था। जेंटलमैन समझौते का प्रमुख लक्ष्य था तेलंगाना क्षेत्र के हित की रक्षा करना। जेंटलमैंन समझौते के प्रमुख प्रावधानों में से एक क्षेत्री समिति का गठन करना तथा तेलंगाना एवं आंध्र प्रदेश के बीच सत्ता का बंटवारा करना था, जिसमें मुख्यमंत्री क्षेत्र से होगा तथा उप–मुख्यमंत्री दूसरे क्षेत्र से होगा। क्षेत्रीय समिति से क्षेत्र की शिकायतों को देखने और उनके समाधान के लिए कुछ उपाय की सिफारिश करने की अपेक्षा की गई थी। कुछ ही समय में तेलंगाना के लोगों ने शिकायत की कि समझौते की शर्तों का पालन नहीं किया गया और तेंलगाना क्षेत्र के साथ भेदभाव किया गया। उन्होंने तेलंगाना को अलग राज्य बनाने की माँग की और नये राज्य के समर्थन में एक आंदोलन शुरू किया। तेलंगाना का आंदोलन विभिन्न चरणों में होकर गुजरा। 1971 के संसदीय चुनावों की पूर्व संध्या पर वकीलों, शिक्षक और छात्रों के एक समूह ने तेलंगाना प्रजा समिती का गठन किया। जिस अलग राज्य बनाने की मांग थी। चेन्ना रेड्डी के नेतृत्व में 14 में से 10 संसदीय सीटें तेलंगाना प्रजा समिति (टी.पी.एस) ने जीतीं। लेकिन चुनावों के बाद टी.पी.एस. का कांग्रेस में विलय हो गया तथा तेलंगाना राज्य का मुद्दा पीछे चला गया। 2001 में के. चंद्रशेखर राव ने तेलंगाना राष्ट्रीय समिति (टी.आर.एस.) का गठन किया जिसका उद्देश्य था तेलंगाना राज्य प्राप्त करना। 2004 में कांग्रेस एवं टी.आर.एस. के बीच

गठबंधन हुआ, जिसमें 2004 के लोकसभा चुनावों में यू.पी.ए. के घोषणा पत्र में तेलंगाना के निर्माण को शामिल किया गया। यू.पी.ए. ने एक उप–समिति का गठन किया जिसमें प्रणव मुखर्जी और शरद् पवार शामिल थे। इसका प्रमुख उद्देश्य तेलंगाना राज्य की माँग पर विचार करना था। 2009 के लोकसभा चुनाव के अवसर पर पी. चिदंबरम जो कि केन्द्रिय गृह मंत्री थे, ने 9 दिसंबर 2009 को घोषणा की कि तेलंगाना राज्य के गठन के लिये प्रक्रिया शुरू की जायेगी। इस अवधि में तेलंगाना संयुक्त कार्रवाई समिति (टी जे ए सी) द्वारा लोकप्रिय लामबंदी देखी गई। विशेष रूप से उस्मानिया विश्वविद्यालय के छात्रों एवं शिक्षकों ने तथा नागरिक समाज संगठनों ने तेलंगाना संयुक्त कार्रवाई समिति बनाई थी। यूपीए – II सरकार ने फरवरी 2010 में तेलगांना राज्य या संयुक्त आद्र राज्य बनाने के मुद्दे पर विचार करने के लिए श्रीकृष्णा समिति का गठन किया। श्री कृष्णा समिति ने दिसम्बर 2010 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस समिति ने एक विकल्प सुझाया जिसमें आंध्र प्रदेश को दो भागों में बाँटने की बात थी, एक सीमांध्री (जिसमें रायलसीमा और आंध्र क्षेत्र शामिल हो) तथा दूसरा तेलंगाना राज्य। परिणामस्वरूप, जून 2014 में तेलंगाना राज्य का गठन किया गया।

6.3.3 असम

पूर्वात्तर भारत में आजादी के बाद से केन्द्र और राज्य तथा स्थानीय निकायों के बीच संबंधों के पुनर्गठन की माँग उठती रही है। इन माँगों का तीन रूप है : 1) संप्रभु राज्य का गठन जैसा कि उग्रवाद जैसे मामलों में शामिल हैं, 2) मौजूदा राज्य से अलग राज्य का गठन या 3) मौजूदा राज्य में उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता। इकाई का यह उप–भाग उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता के प्रश्न से संबंधित है, न कि संप्रभुता के सवाल के साथ जिमसें उग्रवाद शामिल हो। यह निम्नलिखित उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता से संबंधित उदाहरणों के विषय में हैः 1950–1960 के दशक में असम में एक पहाड़ी राज्य के निर्माण की मांग और मैदानी इलाकों में बोडो जनजातियों द्वारा स्वायत्ता के लिये आंदोलन।

पहाड़ी राज्य आंदोलन : मेघालय राज्य का गठन

पहाड़ी जिलों में निवास करने वाली जनजातियाँ मुख्य रूप से मूल (इंडिजिनस) जनजातियाँ जैसे कि जैंतिया, खासी, गारो एवं मिजो जनजातियां, जो कि असम राज्य का हिस्सा थी, 1950–1960 के दशक में एक नये पहाड़ी राज्य की मांग उठाई थी। इस माँग के कारण 1971–72 में असम के भीतर ही एक स्वायत्त राज्य मेघालय का निर्माण हुआ। जो कि बाद में 1972 में असम से अलग, मेघालय राज्य बन गया था। इन पहाड़ी जिलों में जिला परिषदें थी जिन्हें संविधान की छठी अनुसूची के तहत् स्वायत्ता प्राप्त थी। लेकिन आदिवासी जो इन जिलों में रह रहे थे वे असम के भीतर अपनी स्थिति से संतुष्ट नहीं थे, भले ही वे छठी अनुसूची के अनुसार स्वायत्ता का लाभ ले रहे थे। इसके अलावा असम जातिय महासभा के एक संकल्प ने मांग कि कि असमिया को असम के सभी क्षेत्रों में राजभाषा बनाया जाए। इनमें ऐसी भी क्षेत्र थे, जहां पर अधिकांश लोग गैर–असमिया भाषा बोलते थे। इस संदर्भ में जनजातियाँ जैसे कि जेंतिया, खासी, गारो एवं मिजो जो कि असम के पहाड़ी इलाकों में रहती थी, ने अलग पहाड़ी राज्य के गठन की मांग की जो कि उस समय ये इलाके असम के हिस्से थे। इन जिलों के आदिवासी नेतृत्व जैसे कि मुख्य जिला परिषदों के कार्यकारी सदस्यों ने कई बैठकों में कई मुद्दों की चर्चा की। जिसमें दो मुद्दों पर संकल्प लिया

गयाः एक, असम के पहाड़ी जिलों से अलग पहाड़ी राज्य की मांग की तथा दूसरा, छठी अनुसूची में संशोधन करना, क्योंकि इसमें वास्तविक स्वायत्ता नहीं थी। 1954 में तूरा (गारो पहाड़ी) में आदिवासी नेताओं का सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में अलग राज्य की माँग को दोहराया गया और उसके अनुसार राज्य पुनर्गठन आयोग को ज्ञापन भी भेजा गया। आयोग ने इनकी माँग को इस आधार पर निरस्त कर दिया कि उनकी मांग केवल तीन पहाड़ी आदिवासियों जेंतिया, गारो तथा खासी तक ही सीमित थी, तथा असम का बड़ा हिस्सा इसमें शामिल नहीं था। सरकार ने 1965–1966 में एच. वी. पाटस्कर की अध्यक्षता में एक आयोग नियुक्त किया, जिसे पाटस्कर आयोग के रूप में जाना जाता है, जिसका असम के पहाड़ी क्षेत्र में प्रशासनिक ढाँचे के पुनर्गठन पर विचार करना कार्य था। एक अलग राज्य के बजाय, 1 अप्रैल, 1970 को असम राज्य के अंदर ही एक स्वायत्त राज्य बनाया गया, जिसे मेघालय के नाम से जाना जाने लगा। यह 22वें संशोधन (मेघालय संशोधन अधिनियम 55, 1969) के पारित होने के बाद बनाया गया था, जो कि संसद के दोनों सदनों द्वारा असम पुनर्गठन, विधेयक, 1969 में पारित होने के पश्चात् लागू हुआ था। स्वायत्त राज्य के पास सत्ता के वितरण के लिये त्रि–स्तरीय व्यवस्था थी। कार्यकारी शक्तियाँ असम के राज्यपाल के पास थी, असम के अंदर स्वायत्त राज्य के तौर पर। जिसे मेघालय की मंत्रीपरिषद द्वारा सहायता और सलाह दी जाती थी, विधानसभा का सृजन सभी भारतीयों की सदस्या के लिये खोला गया जो कि सिलांग के अलावा मेघालय के अन्य भागों में रहते थे तथा जहाँ पर सभी सीटें अनुसूचित जनजाति के लिये आरक्षित थी, और राज्यपाल को अल्पसंख्यक समुदाय से तीन लोगों को विधान सभा में नामित करने का अधिकार था जिनको उनकी राय में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं था। असम के राज्यपाल को यह भी अधिकार था कि वह ग्राम न्यायालय तथा अपील की अदालत गठन कर सके जिसमें आदिवासियों एवं गैर–आदिवासियों को अपील करने का अधिकार प्राप्त था। सिवाय कानून व्यवस्था, पुलिस, रेलवे, पुसिल, एवं उद्योग तथा बिक्री कर को छोड़कर राज्य के कई विषय असम से मेघालय को स्थानांतरित कर दिये गये थे। असम एवं मेघालय को कृषि, जंगल, यातायात, संचार तथा जलयान में कानून बनाने का अधिकार दिया गया था। 1972 में मेघालय को एक अलग राज्य दर्जा दिया गया था (विस्तृत जानकारी के लिये, चौबे, 1978 को देखें)।

बोडो आंदोलन

असम के कोकरा झार, बक्शा, चिरंग तथा उदालगुरी क्षेत्रों में रहने वाली बोडो जनजाति अपने क्षेत्र के लिये स्वायत्ता की मांग कर रही है ताकि उनकी सांस्कृतिक एवं भाषाई पहचान सुरक्षित रह सके एवं उनके आर्थिक हित भी सुरक्षित रह सके। यद्यपि बोडो आंदोलन 1980 से काफी सक्रिय था लेकिन बोडो स्वायत्ता का प्रश्न 1960 से ही उठाते रहे हैं। उनकी लामबंदी के प्रारंभिक वर्षों में, अर्थात 1960–1970 में, बोडो ने असम से अलग उदयांचल राज्य की मांग की थी। उनका मानना था इस प्रकार का राज्य उनकी सांस्कृतिक पहचान से संबंधित निर्णय ले सकेगा एवं उनके आर्थिक हितों की भी रक्षा कर सके। बोडो आंदोलन 1980 के दशक के अंत में शुरू हुआ था जब भारत सरकार एवं असम सरकार एवं आसू के बीच जिसने आंदोलन की अगुवाई की थी, के बीच में असम समझौते पर हस्ताक्षर हुए थे। बोडो जनजाति ने असम आंदोलन में भाग लिया था।

असम समझौते के बाद, बोड़ो जनजाति के लोगों को स्वायत्ता प्राप्त करने की जरूरत महसूस की। उनको यह महसूस हुआ कि असम समझौते के भाग 6 में, उनके पक्ष में नहीं था, खासकर सांस्कृतिक स्वायत्ता एवं आर्थिक हितों के खिलाफ था। बोडो जनजाति का मानना था कि उनकी एक अलग सांस्कृतिक पहचान हैं एवं उनके आर्थिक हित भी अलग हैं। इसलिये उनकी रक्षा के लिये उन्हें स्वायत्ता की आवश्यकता है। इसके परिणामस्वरूप, बोडो जनजाति ने और अधिक एवं तीव्र आंदोलन शुरू किया ताकि उन्हें स्वायत्ता मिल सके। उन्होंने एक अलग बोडोलैण्ड राज्य के निर्माण की मांग की जिसमें ज्यादातर बोडो जनजाति की जनसंख्या हो। हालांकि कुछ समय में बोडो जनजाति ने अपना ध्यान अलग बोडोलैंड की मांग से हटाकर, अन्य संस्थाओं की तरफ किया जैसे कि जिला स्वायत्त परिषद इससे उन्हें असम के अंदर ही स्वायत्ता का लाभ मिल सकता था। इस संदर्भ में, बोडो जनजाति के नेतृत्व ने भारत सरकार तथा असम सरकार के साथ अलग–अलग समय में समझौतों पर हस्ताक्षर किये और जिससे स्वायत्त निकायों का सृजन किया – अर्थात 1993 में बोडोलैंण्ड स्वायत्त परिषद (वीएसी), 2003 में बोडोलैंड प्रादेशिक परिषद (बीटीसी) तथा 2020 में बोडो प्रादेशिक क्षेत्र (बीटीआर) इत्यादि का गठन किया गया था।

6.4 शासन का प्रश्न

शासन और उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता का प्रश्न आपस में जुड़ा हुआ है। शासन का तात्पर्य है एक राजनीतिक प्रणाली द्वारा कुछ मापदंडों का पालन जैसे कि पारदर्शिता जवाबदेही, समावेशिता, प्रभावशीलता तथा कानून का निमय इत्यादि। इसका मतलब है कि व्यवस्था भ्रष्टाचार से मुक्त हैं और लोकतांत्रिक तरीके से कार्य करता है। क्षेत्रीय स्वायत्ता की मांग इसलिये उठती है क्योंकि वहां के लोगों को लगता है कि उनकी शिकायतों का समाधान उस राज्य में नहीं किया जा रहा है जिसका वे हिस्सा हैं। दूसरे शब्दों में मौजूदा राज्यों में उनके क्षेत्र को ठीक प्रकार से शासन नहीं किया जा रहा है। बड़े राज्यों के मामलों में, विशेषकर उत्तर प्रदेश में, जो लोग राज्य का विभाजन चाहते है या समर्थन करते हैं, उनकी दलील है कि बड़े राज्य ठीक से शासन नहीं चला सकते एवं समान रूप से शासन नहीं कर सकते हैं। अलग राज्यों की माँगों के सभी उदाहरणों में यह दलील दी गई कि नये राज्य सु–शासन के सभी मापदंडों को पूरा करेंगे, वे सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करेंगे, भ्रष्टाचार मुक्त समावेशी एवं लोकतांत्रिक शासन प्रदान करेंगे। हालांकि यह देखा गया कि इस तथ्य के बावजूद कि उन्हें क्षेत्रीय स्वायत्ता मिल गई है, कई छोटे राज्यों में उचित शासन का अभाव है। उनकी कई प्रकार की शिकायतें मिली जैसे कि शासन की कमी, यानि भ्रष्टाचार, लोकतांत्रिक व्यवस्था का अलाव, यहाँ तक कि उन क्षेत्रों में जहाँ क्षेत्रीय या प्रशासनिक स्वायत्ता प्राप्त कर ली है। कुछ लोगों का तर्क है कि आदर्श रूप से छोटे राज्य सु–शासन के लिये उपयुक्त है। लेकिन सुशासन कई अन्य कारकों पर निर्भर करता है जैसे कि विभिन्न हित धारकों में आपसी विश्वास, नेतृत्व की प्रकृति और नागरिक संगठनों की भूमिका।

अभ्यास प्रश्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) झारखंड, छत्तीसगढ़ एवं उत्तराखंड राज्यों के गठन में आंदोलन में समानताऐं एवं अंतरों को रेखांकित कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

2) उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता एवं सुशासन के बीच संबंधों की चर्चा कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

6.5 संदर्भ

बागची, रोमित (2012), *गोरखालैण्ड, क्राईसिस ऑफ स्टेटहुड,* न्यू दिल्ली, सेज प्रकाशन।

बरूआ, संजीव (1999), *इंडिया अगेन्स्ट इटसैल्फः असम एन्ड द् पोलिटिक्स ऑफ नेशनेलिटी,* फिलाडेल्फिया, यूनिवर्सिटी ऑफ पेनसिलवेनिया, प्रेस।

बहरा, नवनीता चड़डा (2000), स्टेट, *आईडेंटिडी एन्ड वायोत्मेंस, जम्मू, कश्मीर एन्ड लद्दाख,* न्यू दिल्ली, मनोहर प्रकाशन।

चौबे, एस. के. (1978), *हिल पोलिटिक्स इन नोर्थ ईस्ट इंडिया, ओरियंट लोंगमैन,* न्यू दिल्ली।

हरगोपाल, जी. (2010), *''द् तेलंगाना पिपुल्स मूवमेंट : द् ऊन पोल्डिंग पोलिटिकल कल्चर'',* ई.पी.डब्ल्यू, 45: 42, अक्टूबर 16–22, पेज 51–60।

मोचाहारी, एम (2004), ''स्टेट हेजीमनी, आईडेंटिडी पोलिटिक्स एण्ड रेजिस्टेंस इन बोडोलैण्ड'', *जर्नल ऑफ ट्राईबल इनटैलेक्चुअल कलौक्टिव इंडिया,* 2 (4), 76–96।

रमेश, जयराम, (2016), *ओल्ड हिस्ट्री, न्यू ज्योग्राफी,* न्यू दिल्ली, रूपा।

सरकार, स्वतःसिद्ध (2013), *गोरखालैण्ड मूवमेंट : रूथानिक कंललिक्ट एण्ड स्टेट रेस्पोंस,* कोनसेटट पब्लिसिंग हाउस, न्यू दिल्ली।

सरकार, सुमित कुमार (2017), ''द् बोडोलैंड डिमांड : जेनेसिस ऑफ एन एथानिक कनालिक्ट'' : *आई. ओ. एस. आर. जर्नल ऑफ हयूमेनिटिव,* एण्ड सोशल साईसं, 22. 01।

सिंह, जगपाल (2017), ''पोलिटिक्स ऑफ हरित प्रदेश : द् केस ऑफ उत्तर प्रदेश एज ए सेपरेट स्टेट'', *ई.पी.डब्ल्यू अगस्त* 4, पेज 2961–67।

टिलिन, लूईस (2013), *रीइमेजिंग इंडिया : द् न्यू स्टेट्स एण्ड देयर पोलिटिक्स ओरिजिंस,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी दिल्ली।

6.6 सारांश

उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता भारत में एक या एक से अधिक राज्यों के क्षेत्रों के भीतर उठाया गया एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। ऐसे क्षेत्रों के लोगों की अक्सर शिकायतें रहती हैं कि उनके क्षेत्र को मौजूद राज्य के भीतर पर्याप्त रूप से संरक्षण नहीं मिलता है। उनका तर्क है कि उन्हें कई प्रकार के भेदभाव का सामना करना पड़ता है जैसे कि सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और आर्थिक विशेष रूप से पिछड़े क्षेत्रों में यह आरोप लगाया जाता है कि कि उनके प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया जाता है ताकि अन्य क्षेत्रों को लाभ मिल सके। क्षेत्र की शिकायतें वास्तविकता एवं धारणा, दोनों पर आधारित है। शिकायत चेतना क्षेत्रीय पहचान के गठन को बढ़ावा देती है और राजनीतिक स्वायत्ता की मांग को बढ़ावा देती है। उप–क्षेत्र के लोगों का तर्क है कि उनके क्षेत्र को स्वायत्ता प्रदान करने से वे नीतियां बनाने में सक्षम हो सकते हैं तथा उनके प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल भी उनके विकास के लिये हो सकता है। उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता की मांग विभिन्न रूपों में की गई है – जैसे मौजूदा राज्य में से नये राज्यों का गठन करना, राज्य के भीतर स्वायत्त राज्य बनाना, स्वायत्त जिला का गठन, क्षेत्रीय परिषद का गठन या संघीय परिषद का गठन इत्यादि। क्षेत्रीय स्वायत्ता की मांग राजनीतिक संदर्भ में आम बन गई है। भारत में, इस प्रकार की माँग विभिन्न राज्यों में विभिन्न रूपों में उठायी जाने लगी है।

6.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता की मांग के विभिन्न कारक हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार है – अन्य क्षेत्रों द्वारा किसी एक विशेष क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करना, सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान की कमी तथा लोक संस्थानों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व की कमी।

2) संघीय संस्थाऐं समकालीन विश्व में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। संघीय संस्थान उप–क्षेत्रीय स्वायत्ता समस्याओं को समायोजित करते हैं। उप–क्षेत्रीय और प्रशासनिक इकाइयों के बीच संबंधों की प्रकृति संघीय संरचना की उपस्थिति का संकेत देती है।

अभ्यास प्रश्न 2

1) छत्तीसगढ़, झारखंड एवं उत्तराखंड के बीच समानताऐं इस प्रकार हैं – इन तीनों की शिकायत है कि उनकी सरकारों ने उनके साथ भेदभाव किया है, इनमें से छत्तीसगढ़ एवं झारखंड में आदिवासी जनसंख्या काफी है, और वे 21वीं सदी के नये राज्यों के प्रथम उदाहरण थे। उनमें से अंतर भी इस प्रकार है – छत्तीसगढ़ की माँग के लिए आंदोलन नहीं हुए जबकि उत्तराखंड एवं झारखंड का गठन आंदोलन के पश्चात् किया गया।

2) क्षेत्रीय स्वायत्ता और शासन परस्कर संबंधित है। शासन प्रशासन में पारदर्शिता, जवाबदेही, प्रभावोरपादकता तथा समावेशिता के बारे में है। स्वायत्ता के लिए मांग शासन की कमी के कारण उत्पन्न कई शिकायतों से है। और क्षेत्रीय स्वायत्ता के समर्थक तर्क देते है कि स्वायत्ता से सुशासन प्राप्त किया जा सकता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY